३५२

२८
२६२४

र महावीर
और
कर्मवीर कृष्ण

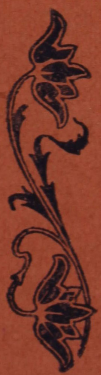

लेखक—पं० सुखलालजी
अनु०—पं० शोभाचन्द्रजी भारिल्ल न्यायतीर्थ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

1260

आत्मजागृति ग्रन्थमाला पुष्प ३८

धर्मवीर महावीर

और

कर्मवीर कृष्ण

लेखक—श्री पं० सुखलालजी

अनुवादक—पं० शोभाचन्द्र भारिल्ल न्यायतीर्थ

प्रकाशक—

आत्मजागृति कार्यालय, ब्यावर (राजपूताना)

द्रव्यसहायक—

श्रीनथमलजी सा० बैद, फलौदी.

पं० राधावल्लभ शर्मा के प्रबन्ध से श्री अजमेर प्रिंटिंग वर्क्स,
अजमेर में मुद्रित ।

प्रथम संस्करण] १९३४ [मूल्य -)॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दो शब्द ।

प्रस्तुत पुस्तिका 'उत्थान' में प्रकाशित एक गुजराती निबन्ध का अनुवाद है। विद्वान् लेखक ने इसमें जो सूक्ष्म और विद्वत्तापूर्ण विचार प्रकट किये हैं, वे अवश्य बहुमूल्य हैं। साहित्य पर समाज की तत्कालीन परिस्थिति का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता, यही कारण है कि एक ही संस्कृति का प्रतिपादन करने वाला साहित्य सामयिक परिवर्त्तन के कारण अनेक रूपों में पाया जाता है। जैनसाहित्य के विभिन्न रूपों का भी यही कारण है। ऐसा सदा से होता रहा है और होता रहेगा। ग्रंथकारों का इसमें शुभाशय ही होता है।

आज साम्प्रदायिकता का जो नग्न ताण्डव होरहा है उसने वास्तविक धर्म का गला घोंट डाला है और धर्मसाध्य आत्मिक विकास को रोक कर एक प्रकार की नास्तिकता को जन्म दिया है। जैनों का अनेकान्तवाद प्रारम्भ से ही इस प्रकार की साम्प्रदायिकता का घोर शत्रु रहा है और उसने उसे रोकने का भरसक प्रयास किया है। प्रस्तुत रचना ऐसी ही एक रचना है जो धर्म और कर्म की वास्तविकता की व्याख्या करके दोनोंके बीच जबर्दस्ती खड़ी कीजाने वाली दीवाल को तोड़ गिराती है। आशा है पाठक इससे लाभ उठायँगे।

इस पुस्तक के प्रकाशन का व्यय फलौदी निवासी श्रीमान् नथमलजी सा० वैद ने सहन किया है, अतएव हम उनके आभारी हैं। मूल लेखक विद्वद्वर्य पं० सुखलालजी, प्रोफेसर हिन्दू विश्वविद्यालय, के भी हम ऋणी हैं जिन्होंने अनुवाद करने की आज्ञा देकर हमें कृतार्थ किया है।

—प्रकाशक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

धर्मवीर महावीर और कर्मवीर कृष्ण।

दैवीपूजामें से मनुष्यपूजाका क्रमिक विकास।

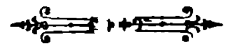

अन्य देशों और अन्य प्रजाकी भाँति इस देश में और आर्य-प्रजामें भी प्राचीनकालसे क्रियाकाण्ड और वहमोंके राज्यके साथ ही साथ थोड़ा बहुत आध्यात्मिक भाव मौजूद था। वैदिक मंत्र-युग और ब्राह्मणयुगके विस्तृत और जटिल क्रियाकाण्ड जब यहाँ होते थे तब भी आध्यात्मिक चिन्तन, तपका अनुष्ठान और भूत-दयाकी भावना, ये तत्त्व मौजूद थे, यद्यपि थे वे अल्प मात्रामें। धीरे धीरे सद्गुणोंका महत्व बढ़ता गया और क्रियाकाण्ड तथा वहमोंका राज्य घटता गया। प्रजाके मानसमें, ज्यों ज्यों सद्गुणोंकी प्रतिष्ठा स्थान प्राप्त करती गई, त्यों-त्यों उसके मानससे क्रियाकाण्ड और वहम हटते गये। क्रियाकाण्ड और वहमोंकी प्रतिष्ठाके साथ, हमेशा अदृश्य शक्तिका सम्बन्ध जुड़ा रहता है। जबतक कोई अदृश्य शक्ति मानी या मनाई न जावे (फिर भले ही वह देव, दानव, दैत्य, भूत, पिशाच या किसी भी नामसे कही जाय) तब तक क्रियाकाण्ड और वहम न चल सकते हैं और न जीवित ही रह सकते हैं। अतएव क्रियाकाण्ड और वहमोंके साम्राज्यके समय, उनके साथ देवपूजा अनिवार्य रूपसे जुड़ी हुई हो, यह स्वाभाविक है। इसके विपरीत सद्-गुणोंकी उपासना और प्रतिष्ठाके साथ किसी अदृश्य शक्तिका नहीं वरन् प्रत्यक्ष दिखाई देनेवाली मनुष्य व्यक्तिका सम्बन्ध होता है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सद्गुणोंकी उपासना करनेवाला या दूसरोंके समक्ष उस आदर्शको उपस्थित करनेवाला व्यक्ति, किसी विशिष्ट मनुष्यको ही अपना आदर्श मानकर उसका अनुकरण करनेका प्रयत्न करता है। इस प्रकार सद्गुणोंकी प्रतिष्ठा की वृद्धिके साथही साथ अदृश्य देवपूजाका स्थान दृश्य मनुष्यपूजाको प्राप्त होता है।

मनुष्य पूजाकी प्रतिष्ठा।

यद्यपि सद्गुणोंकी उपासना और मनुष्यपूजाका पहलेसे ही विकास होता जारहा था, तथापि भगवान् महावीर और बुद्ध इन दोनोंके समयमें इस विकास को असाधारण विशेषता प्राप्त हुई, जिसके कारण क्रियाकाण्ड और वहमोंके क़िलोंके साथ साथ उसके अधिष्ठायक अदृश्य देवोंकी पूजाको भी तीव्र आघात पहुँचा। भगवान महावीर और बुद्ध का युग अर्थात् सचमुच मनुष्य पूजाका युग। इस युगमें सैकड़ों हजारों स्त्री पुरुष क्षमा, सन्तोष, तप, ध्यान आदि सद्गुणों के संस्कार प्राप्त करनेके लिये अपने जीवन को अर्पण करते हैं और इन गुणोंकी पराकाष्ठाको पहुँचे हुए अपने श्रद्धास्पद महावीर और बुद्ध जैसे मनुष्य–व्यक्तियोंकी ध्यान या मूर्त्ति द्वारा पूजा करते हैं। इस प्रकार मानव पूजाके भावकी बढ़तीके साथ ही देवमूर्त्तिका स्थान विशेषतः मनुष्यमूर्त्तिको प्राप्त होता है।

महावीर और बुद्ध जैसे तपस्वी, त्यागी और ज्ञानी पुरुषों द्वारा सद्गुणोंकी उपासनाको वेग मिला और उसका स्पष्ट प्रभाव क्रियाकाण्डप्रधान ब्राह्मण संस्कृति पर पड़ा। वह यह कि जो ब्राह्मण संस्कृति एक बार देव दानव और दैत्योंकी भावना एवं उपासनामें मुख्य रूपसे मशगूल थी, उसने भी मनुष्यपूजाको स्थान दिया। अब जनता अदृश्य देवके बदले किसी महान् विभूति रूप मनुष्यको पूजने, मानने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और उसका आदर्श अपने जीवनमें उतारने के लिए तत्पर हुई। इस तत्परताका उपशमन करने के लिए ब्राह्मण संस्कृतिने भी राम और कृष्णके मानवीय आदर्शकी कल्पना की और एक मनुष्यके रूपमें उनकी पूजा प्रचलित होगई। महावीर-बुद्ध युगसे पहले राम और कृष्णकी, आदर्श मनुष्यके रूपमें पूजा होनेका कोईभी चिह्न शास्त्रोंमें नहीं दिखाई देता। इसके विपरीत महावीर-बुद्ध युगके पश्चात् या उस युगके साथही साथ राम और कृष्णकी मनुष्यके रूपमें पूजा होनेके हमें स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। इससे तथा अन्य साधनोंसे यह माननेके लिये पर्याप्त कारण हैं कि मानवीय पूजाकी मजबूत नींव महावीर-बुद्ध युगमें डाली गई और देवपूजकवर्गमें भी मनुष्यपूजा के विविध प्रकार और सम्प्रदाय इसी युगमें प्रारम्भ हुए।

मनुष्यपूजामें दैवीभावका मिश्रण।

लाखों करोड़ों मनुष्योंके मनमें सैकड़ों और हजारों वर्षोंसे जो संस्कार रूढ़ हो चुके हों, उन्हें एकाध प्रयत्नसे, थोड़ेसे समयमें बदल देना संभव नहीं। इस प्रकार अलौकिक देवमहिमा, दैवी चमत्कार और देवपूजाकी भावनाके संस्कार प्रजाके मानसमें से एकदम न निकल सके थे। इन्हीं संस्कारों के कारण ब्राह्मण संस्कृतिने यद्यपि राम और कृष्ण जैसे मनुष्योंको आदर्शके रूपमें उपस्थित करके उनकी पूजा प्रतिष्ठा शुरूकी, तथापि प्रजाकी मनोवृत्ति ऐसी न बन सकीथी कि वह दैवीभावके सिवाय और कहीं संतुष्ट होसके। इस कारण ब्राह्मण संस्कृति के तत्कालीन अगुवा विद्वानोंने, यद्यपि राम और कृष्णको एक मनुष्यके रूपमें चित्रित किया, वर्णित किया, तो भी उनके आन्तरिक और बाह्य जीवनके साथ अदृश्य दैवी अंश और अदृश्य दैवी कार्यका सम्बन्ध भी जोड़ दिया। इसी प्रकार महावीर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और बुद्ध आदिके उपासकोंने उन्हें शुद्ध मनुष्यके स्वरूपमें ही चित्रित किया, फिरभी उनके जीवनके किसी न किसी भागके साथ अलौकिक दैवी सम्बन्ध भी जोड़ दिया। ब्राह्मण-संस्कृति आत्मतत्त्वको एक और अखण्ड मानती है अतः उसने राम और कृष्णके जीवनका ऐसा चित्रण किया जो अपने मन्तव्यसे मेल रखनेवाला और साथही स्थूल लोगोंकी दैवी पूजाकी भावनाको भी सन्तुष्ट करनेवाला हो। उसने परमात्मा विष्णुके ही राम और कृष्णके रूपमें अवतार लेनेका वर्णन किया। परन्तु श्रमण संस्कृति आत्मभेदको स्वीकार करती है और कर्मवादी है, अतः उसने अपने तत्त्वज्ञानके अनुरूप ही अपने उपास्य देवोंका वर्णन किया और जनताकी दैवीपूजाकी हवस मिटानेके लिए अनुचर और भक्तोंके रूपमें देवोंका सम्बन्ध महावीर और बुद्ध आदि के साथ जोड़ दिया। इस प्रकार दोनों संस्कृतियोंका अन्तर स्पष्ट है। एक में मनुष्यपूजाका प्रवेश हो जाने पर भी दिव्य अंशही मनुष्यके रूपमें अवतरित होता है अर्थात् आदर्श मनुष्य अलौकिक दिव्य शक्तिका प्रतिनिधि बनता है और दूसरी संस्कृतिमें मनुष्य अपने सद्-गुण प्राप्तिके लिए किए गये प्रयत्नसे स्वयमेव देव बनता है और जनतामें माने जाने वाले देव उस आदर्श मनुष्यके सेवक मात्र हैं, और उसके भक्त या अनुचर बनकर उसके पीछे पीछे फिरते हैं।

चार महान् आर्य-पुरुष।

महावीर और बुद्धकी ऐतिहासिकता निर्विवाद है—उसमें सन्देह को जरा भी अवकाश नहीं है, जब कि राम और कृष्णके विषयमें इससे उलटी ही बात है। इनकी ऐतिहासिकताके विषयमें जैसे प्रमाणोंकी आवश्यकता है वैसे प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। अतः इनके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सम्बन्धमें परस्पर विरोधी अनेक कल्पनाएँ फैल रही हैं। इतना होने पर भी प्रजाके मानसमें राम और कृष्णका व्यक्तित्व इतना अधिक व्यापक और गहरा अंकित है कि प्रजाके विचारसे तो ये दोनों महान् पुरुष सच्चे ऐतिहासिक ही हैं। विद्वान् और संशोधक लोग उनकी ऐतिहासिकताके विषयमें भले ही वादविवाद और ऊहापोह किया करें, उसका परिणाम भले ही कुछ भी हो, फिर भी जनताके हृदय पर इनके व्यक्तित्वकी जो छाप बैठी हुई है, उसे देखते हुए तो यह कहना ही पड़ता है कि ये दोनों महापुरुष जनताके हृदयके हार हैं। इस प्रकार विचार करनेसे प्रतीत होता है कि आर्यप्रजामें मनुष्य के रूपमें पुजने वाले चार ही पुरुष हमारे सामने उपस्थित होते हैं और आर्यधर्मकी वैदिक, जैन और बौद्ध तीनों शाखाओंके पूज्य पुरुष उक्त चार ही हैं। यही चारों पुरुष भिन्नभिन्न प्रान्तोंमें, भिन्नभिन्न जातियोंमें, भिन्नभिन्न रूपसे पूजे जाते हैं।

चारोंकी संक्षिप्त तुलना।

राम और कृष्ण एवं महावीर और बुद्ध ये दोनों युगल कहिये या चारों महान् पुरुष कहिए, क्षत्रिय जातीय हैं। चारोंके जन्मस्थान उत्तर-भारतमें हैं और सिवाय रामचन्द्रजीके, किसीका भी प्रवृत्ति-क्षेत्र दक्षिण भारत नहीं बना।

राम और कृष्णका आदर्श एक प्रकारका है, और महावीर तथा बुद्धका दूसरे प्रकारका। वैदिकसूत्र और स्मृतियोंमें वर्णित वर्णाश्रम धर्मके अनुसार राज्यशासन करना, गोब्राह्मणका प्रतिपालन करना उसीके अनुसार न्याय अन्यायका निर्णय करना और इसी प्रकार न्यायका राज्य स्थापित करना यह राम और कृष्णके उपलब्ध जीवन-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वृत्तान्तोंका आदर्श है। इसमें भोग है, युद्ध है और तमाम दुनियावी प्रवृत्तियाँ हैं। परन्तु यह प्रवृत्तिचक्र जनसाधारणको नित्यके जीवन-क्रममें पदार्थपाठ देनेके लिए है। महावीर और बुद्धके जीवनवृत्तान्त इससे बिलकुल भिन्न प्रकारके हैं। इनमें न भोगकी धमाचौकड़ी है और न युद्धकी तैयारी ही। इनमें तो सबसे पहले अपने जीवनके शोधनका ही प्रश्न उपस्थित होता है और उनके अपने जीवनकी शुद्धि होनेके पश्चात्‌ही, उसके फलस्वरूप प्रजाको उपयोगी होनेकी बात है। राम और कृष्णके जीवनमें सत्वसंशुद्धि होने पर भी रजोगुण मुख्यरूपसे काम करता है और महावीर तथा बुद्धके जीवनमें राजस अंश होनेपर भी मुख्य रूपसे सत्वसंशुद्धि काम करती है। अतएव पहले आदर्शमें अन्तर्मुखता होने पर भी मुख्यरूपसे बहिर्मुखता प्रतीत होती है और दूसरेमें बहिर्मुखता होने पर भी मुख्यरूपसे अन्तर्मुखताका प्रतिभास होता है। इसी बातको यदि दूसरे शब्दोंमें कहें तो यह कह सकते हैं कि एक आदर्श कर्मचक्रका है और दूसरा धर्मचक्रका है। इन दोनों विभिन्न आदर्शोंके अनुसार ही इन महा-पुरुषोंके संप्रदाय स्थापित हुए हैं। उनका साहित्य भी उसी प्रकार निर्मित हुआ है, पुष्ट हुआ है और प्रचारमें आया है। उनके अनु-यायी वर्गकी भावनाएँ भी इस आदर्शके अनुसार गढ़ी गई हैं और उनके अपने तत्त्वज्ञानमें तथा उनके मत्थे मढ़े हुए तत्त्वज्ञानमें इसी प्रवृत्तिनिवृत्तिके चक्रको लक्ष्य करके सारा तंत्र संगठित किया गया है। उक्त चारों ही महान् पुरुषोंकी मूर्त्तियाँ देखिए, उनकी पूजाके प्रकारों पर नजर डालिए या उनके मंदिरोंकी रचना तथा स्थापत्य का विचार कीजिए, तो भी उनमें इस प्रवृत्तिचक्र और निवृत्तिचक्र की भिन्नता साफ़ दिखाई देगी। उक्त चार महान पुरुषोंमें से यदि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बुद्धको अलग करदें तो सामान्यतया यह कह सकते हैं कि बाक़ीके तीनों पुरुषोंकी पूजा, उनके सम्प्रदाय तथा उनका अनुयायीवर्ग भारतवर्षमें ही विद्यमान है; जब कि बुद्धकी पूजा, सम्प्रदाय तथा उनका अनुयायीवर्ग एशिया-व्यापी बना है। राम और कृष्णके आदर्शोंका प्रचारकवर्ग पुरोहित होनेके कारण गृहस्थ है जब कि महावीर और बुद्धके आदर्शोंका प्रचारकवर्ग गृहस्थ नहीं, त्यागी है। राम और कृष्णके उपासकोंमें हजारों सन्यासी हैं, फिर भी वह संस्था महावीर एवं बुद्धके भिक्षुसंघकी भाँति तन्त्रबद्ध या व्यवस्थित नहीं है। गुरु पदवीको धारण करनेवाली हजारों स्त्रियाँ आजभी महावीर और बुद्धके भिक्षुसंघमें मौजूद हैं, जब कि राम और कृष्णके उपासक सन्यासीवर्गमें वह वस्तु नहीं है। राम और कृष्णके मुखसे साक्षात् उपदेश किये हुए किसी शास्त्रके होनेके प्रमाण नहीं हैं जब कि महावीर और बुद्धके मुखसे साक्षात् उपदिष्ट थोड़े बहुत अंश अब भी निर्विवाद रूपसे मौजूद हैं। राम और कृष्णके मत्थे मढ़े हुए शास्त्र संस्कृत भाषामें हैं, जब कि महावीर और बुद्धके उपदेश तत्कालीन प्रचलित लोकभाषामें हैं।

तुलनाकी मर्यादा और उसके दृष्टिबिन्दु।

हिन्दुस्थानमें सार्वजनिक पूजा पाये हुए ऊपरके चार महापुरुषों में से किसी भी एकके जीवनके विषयमें विचार करना हो या उनके सम्प्रदाय, तत्त्वज्ञान अथवा कार्यक्षेत्रका विचार करना हो तो अवशेष तीनोंके साथ सम्बन्ध रखनेवाली उस उस वस्तुका विचार भी साथ ही करना चाहिए। क्योंकि इस समय भारतमें एक ही जाति और एक ही कुटुम्बमें अक्सर चारों पुरुषोंकी या उनमें से अनेक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पुरुषोंकी पूजा या मान्यता प्रचलित थी और अब भी है। अतएव इन पूज्य पुरुषोंके आदर्श मूलतः भिन्न भिन्न होने पर भी बादमें उनमें आपसमें बहुतसा लेनदेन हुआ है और एक दूसरेका एक दूसरे पर बहुत प्रभाव पड़ा है। वस्तुस्थिति इस प्रकारकी होनेपर भी यहाँ पर सिर्फ़ धर्मवीर महावीरके जीवनके साथ कर्मवीर कृष्णके जीवन की तुलना करनेका ही विचार किया गया है। इन दोनों महान् पुरुषों के जीवन-प्रसंगोंकी तुलना भी उपयुक्त मर्यादाके भीतर रहकर ही करनेका विचार है। समग्र जीवनव्यापी तुलना एवं और चारों पुरुषों की एक साथ विस्तृत तुलना करनेके लिये जिस समय और स्वास्थ्य की आवश्यकता है, उसका इस समय अभाव है। अतएव यहाँ बहुत ही संक्षेपमें तुलना की जायगी। महावीरके जन्मक्षणसे लेकर केवल-ज्ञानकी प्राप्ति तकके प्रसंगोंको कृष्णके जन्मसे लेकर कंसवध तक की कुछ घटनाओंके साथ मिलान किया जायगा।

यह तुलना मुख्य रूपसे तीन दृष्टि-बिन्दुओंको लक्ष्य करके की जायगी—

(१) प्रथम तो यह फलित करना कि दोनोंके जीवनकी घटनाओंमें क्या संस्कृतिभेद है ?

(२) दूसरे, इस बातकी परीक्षा करना कि इस घटनावर्णन का एक दूसरे पर कुछ प्रभाव पड़ा है या नहीं ? और इससे कितना परिवर्त्तन और विकास सिद्ध हुआ है ?

(३) तीसरे, यह कि जनतामें धर्मभावना जागृत रखने और सम्प्रदायका आधार सुदृढ़ बनानेके लिए कथाग्रंथों एवं जीवन-वृत्तान्तोंमें प्रधान रूपसे किन साधनोंका उपयोग किया जाता था, इसका पृथक्करण करना और उसके औचित्यका विचार करना।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पर सम्प्रदायोंके शास्त्रोंमें उपलब्ध निर्देश एवं वर्णन।

ऊपर कहे हुए दृष्टिविन्दुओंसे कतिपय घटनाओंका उल्लेख करने से पूर्व एक बात यहाँ खास उल्लेखनीय है । वह विचारकोंके लिये कौतूहलवर्द्धक है, इतना ही नहीं वरन् अनेक ऐतिहासिक रहस्योंके उद्घाटन और विश्लेषणके लिए उनसे सतत् और अवलोकनपूर्ण मध्यस्थ प्रयत्नकी अपेक्षा भी रखती है। वह यह है—बौद्धपिटकोंमें ज्ञातपुत्रके रूपमें भगवान महावीरका अनेकों बार स्पष्ट निर्देश पाया जाता है परन्तु राम और कृष्णमें से किसीका भी निर्देश नहीं है। पीछेकी बौद्ध जातकोंमें (देखिए दशरथ जातक नं० ४६१) राम और सीताकी कुछ कथा आई है परन्तु वह वाल्मीकिके वर्णनसे एकदम भिन्न प्रकारकी है। उसमें सीताको रामकी बहिन कहा गया है। कृष्णकी कथा तो किसी भी बौद्धग्रन्थमें आज तक मेरे देखनेमें नहीं आई। किन्तु जैनशास्त्रोंमें राम और कृष्ण—इन दोनोंकी जीवन कथाओंने क़ाफी स्थान घेरा है। आगम माने जाने और अन्य आगम ग्रंथोंकी अपेक्षा प्राचीन गिने जानेवाले अंग साहित्यमें, रामचन्द्रजीकी कथा तो नहीं है फिर भी कृष्णकी कथा दो अंगों—ज्ञाता और अंतगड—में स्पष्ट और विस्तृत रूपसे आती है। आगम ग्रंथों में स्थान न पाने वाली रामचन्द्रजीकी कथा भी पिछले श्वेताम्बर, दिगम्बर दोनोंके प्राकृत संस्कृतके कथासाहित्यमें विशिष्ट स्थान प्राप्त करती है। जैनसाहित्यमें वाल्मीकि-रामायणकी जगह जैनरामायण तक बन जाती है। यह तो स्पष्ट है कि श्वेताम्बर, दिगम्बर—दोनों के साहित्यमें राम और कृष्णकी कथा ब्राह्मण-साहित्य जैसी हो ही नहीं सकती, फिर भी इन कथाओं और इनके वर्णनकी जैनशैली को देखते हुए यह स्पष्ट प्रतीत हो जाता है कि ये कथाएँ मूलतः ब्रा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ब्राह्मणसाहित्यकी ही होनी चाहिए और लोकप्रिय होनेपर उन्हें जैन-साहित्यमें जैनदृष्टिसे स्थान दिया गया होना चाहिए। इस विषयको हम आगे चलकर स्पष्ट करेंगे।

आश्चर्यकी बात तो यह है कि जैनसंस्कृतिसे अपेक्षाकृत अधिक भिन्न ब्राह्मण संस्कृतिके माननीय राम और कृष्णने जैनसाहित्यमें जितना स्थान रोका है, उससे हजारवें भाग भी स्थान भगवान् महावीरके समकालीन और उनकी संस्कृतिसे अपेक्षाकृत अधिक नजदीक तथागत बुद्धके वर्णनको प्राप्त नहीं हुआ! बुद्धका स्पष्ट या अस्पष्ट नामनिर्देश केवल आगम ग्रन्थोंमें एकाध जगह आता है (यद्यपि उनके तत्त्वज्ञानकी सूचनाएँ विशेष प्रमाणमें मिलती हैं)। यह तो हुआ बौद्ध और जैनकथाग्रन्थोंमें राम और कृष्णकी कथाके विषय में; अब हमें यह भी देखना चाहिए कि ब्राह्मण-शास्त्रमें महावीर और बुद्धका निर्देश कैसा क्या है? पुराणोंसे पहलेके किसी ब्राह्मण ग्रन्थमें तथा विशेष प्राचीन माने जाने वाले पुराणोंमें यहाँ तक कि महाभारतमें भी, ऐसा कोई निर्देश या अन्य वर्णन नहीं है जो ध्यान आकर्षित करे। फिर भी इसी ब्राह्मणसंस्कृतिके अत्यंत प्रसिद्ध और अतिशय माननीय भागवतमें बुद्ध, विष्णुके एक अवतारके रूपमें ब्राह्मणमान्य स्थान प्राप्त करते हैं, ठीक इसी प्रकार जैसे जैनग्रन्थोंमें कृष्ण एक भावी तीर्थंकरके रूपमें स्थान पाते हैं। इस प्रकार पहलेके ब्राह्मणसाहित्यमें स्थान प्राप्त न कर सकनेवाले बुद्ध धीमे धीमे इस साहित्यमें एक अवतारके रूपमें प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं, जब कि स्वयं बुद्ध भगवानके समकालीन और बुद्धके साथ ही साथ ब्राह्मण-संस्कृतिके प्रतिस्पर्द्धी, तेजस्वी पुरुषके रूपमें एक विशिष्ट सम्प्रदायके नायक पदको धारण करनेवाले, इतिहास प्रसिद्ध भगवान महावीर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को किसी भी प्राचीन या अर्वाचीन ब्राह्मण ग्रन्थमें स्थान प्राप्त नहीं होता। यहाँ विशेषरूपसे ध्यान आकर्षित करनेवाली बात तो यह है कि महावीरके नाम या जीवनवृत्तान्तका कुछ भी निर्देश ब्राह्मण-साहित्यमें नहीं है, फिर भी भागवत जैसे लोकप्रिय ग्रन्थमें जैनसम्प्रदायके पूज्य और अति प्राचीन माने जानेवाले प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेवकी कथाने संक्षिप्त होने पर भी मार्मिक और आदरणीय स्थान पाया है।

तुलना।

(इस तुलनामें, जिन शब्दोंको मोटे टाइपमें दिया गया है, उन पर भाषा और भावकी समानता देखनेके लिये पाठकोंको ख़ास लक्ष्य देना चाहिये। ऐसा करनेसे आगेका विवेचन स्पष्ट रूपमें समझा जा सकेगा।)

(१)

गर्भहरण-घटना*।

महावीर।	कृष्ण।
जम्बूद्वीपके भरतक्षेत्रमें ब्राह्मणकुंड नामक ग्राम था। उसमें बसने वाले ऋषभदत्त नामक ब्राह्मणकी देवानन्दा नामकी स्त्रीके गर्भमें नन्दन मुनिका जीव दशवें देवलोकसे च्युत होकर	असुरोंका उपद्रव मिटानेके लिये देवोंकी प्रार्थनासे विष्णुने अवतार लेनेका निश्चय करके योगमाया नामक अपनी शक्तिको बुलाया। उसको संबोधन करके विष्णुने कहा—

* किसी भी दिगम्बर सम्प्रदायके ग्रंथमें, महावीरके जीवनमें इस घटनाका उल्लेख नहीं है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अवतरित हुआ । तेरासीवें दिन इन्द्रकी आज्ञासे उसके सेनापति नैगमेषी देवने इस गर्भ को क्षत्रियकुण्ड नामक ग्रामके निवासी सिद्धार्थ क्षत्रियकी धर्मपत्नी त्रिशला रानीके गर्भमें बदल कर उस रानीके पुत्री रूप गर्भको देवानन्दाकी कोखमें रख दिया । उस समय उस देवने इन दोनों माताओंको अपनी शक्तिसे खास निद्रावश करके बेभान–सी बना दिया था । नौ मास पूर्ण होने पर त्रिशलाकी कोखसे जन्म पानेवाला, वही जीव, भगवान् महावीर हुआ। गर्भहरण करानेसे पूर्व इसकी सूचना इन्द्रको आसनके काँपनेसे मिली थी। इन्द्रने आसनके काँपनेके कारणका विचार किया तो उसे मालूम हुआ कि तीर्थंकर सिर्फ उच्च और शुद्ध क्षत्रिय कुलमें ही जन्म लेसकते हैं, अतः तुच्छ भिखारी और नीच इस ब्राह्मणकुलमें महावीरके जीवका अवतरित होना योग्य नहीं है । ऐसा विचार कर इन्द्र ने अपने कल्पके अनुसार, अपने अनुचर देवोंके द्वारा योग्य गर्भ-परिवर्त्तन कराकर कर्त्तव्य पालन किया । महावीरके जीवने पूर्व भवमें बहुत दीर्घतू जा और देवकीके गर्भमें मेरा जो शेष अंश आया हुआ है, उसे वहाँ से संकर्षण (हरण) करके वसुदेवकी ही दूसरी स्त्री रोहिणीके गर्भमें प्रवेश कर, जो बलभद्र रामके रूपमें अवतार लेगा और तू नन्दपत्नी यशोदाके घर पुत्री रूपमें अवतार पायेगी । जब मैं देवकीके आठवें गर्भ के रूपमें जन्मूँगा तब तेरा भी यशोदा के घर जन्म होगा । एक साथ जन्मे हुए हम दोनों का, एक दूसरेके यहाँ परिवर्त्तन होगा । विष्णुकी आज्ञा शिरोधार्य करके उस योगमाया शक्ति ने देवकीको योग निद्रावश करके सातवें महीने उसकी कोखमें से शेष गर्भका रोहिणीकी कुक्षिमें संहरण किया । इस गर्भसंहरण करने का विष्णुका हेतु यह था कि कंसको, जो देवकीसे जन्मे हुए बालकोंकी गिनती करता था और आठवें बालकको अपना पूर्ण शत्रु मानकर उसका नाश करनेके लिए तत्पर था, गिनती करने में शिकस्त देना । जब कृष्णका जन्म हुआ तब देवता आदि सबने पुष्प आदिकी वृष्टि करके उत्सव मनाया । जन्म होते ही वसुदेव तत्काल

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

काल पूर्व कुल मद करके जो नीच गोत्र उपार्जन किया था, उसके अनिवार्य फलके रूपमें नीच या तुच्छ गिने जाने वाले ब्राह्मण कुलमें थोड़े समयके लिये ही सही, परन्तु जन्म लेना ही पड़ा। भगवान्‌के जन्म-समय विविध देवदेवियोंने अमृत, गन्ध, पुष्प, सुवर्ण, चाँदी आदि की वर्षा की। जन्मके पश्चात् स्नात्रके लिये इन्द्र जब मेरुपर लेगया तब उसने त्रिशला माताको अवस्वापनी निद्रासे बेभान कर दिया।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग २, पृ० १६-१९।

जन्मे हुए बालक कृष्णको उठाकर यशोदाके यहाँ पहुँचाने ले गये। तब द्वारपाल तथा अन्य रक्षक लोग योगमायाकी शक्तिसे निद्रावश हो अचेत हो गए।

—भागवत दशमस्कन्ध अ० २, १–१३ तथा अ० ३ श्लो० ४६-५०

(२)

पर्वत—कम्पन

जब देव-देवियाँ महावीरका जन्माभिषेक करनेके लिये लेगए तब उन्हें अपनी शक्तिका परिचय देनेके लिए और उनकी शंकाका निवारण करनेके लिये इस तत्काल प्रसूत बालकने केवल अपने पैरके अँगूठेसे दबाकर एक लाख योजनके सुमेरु पर्वतको कँपा दिया।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग २, पृ० १९

इन्द्रके द्वारा किये हुए उपद्रवोंसे रक्षण करनेके लिए तरुण कृष्ण ने योजन प्रमाण गोवर्धन पर्वतको सात दिन तक ऊपर उठाए रखा।

—भागवत, दशमस्कन्ध, अ० ४३ श्लो० २६–२७

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

(३)

बाल—क्रीड़ा

(१) करीब आठ वर्षकी उम्रमें वीर जब बालक राजपुत्रोंके साथ खेल रहे थे, तब स्वर्गमें इन्द्रके द्वारा की हुई उनकी प्रशंसा सुनकर, वहाँका एक मत्सरी देव भगवान्‌के पराक्रमकी परीक्षा करने आया। पहले उसने एक विकराल सर्पका रूप धारण किया। यह देख कर दूसरे राजकुमार तो डरकर भाग गये, परन्तु कुमार महावीरने ज़राभी भयभीत न होते हुए उस साँपको रस्सी की भाँति उठाकर दूर फेंक दिया।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग २, पृष्ठ २१

(२) फिर इसी देवने महावीर को विचलित करनेके लिए दूसरा मार्ग लिया। जब सब बालक आपस में घोड़ा बनकर, एक दूसरेको वहन करनेका खेल खेल रहे थे तब

(१) कृष्ण जब अन्य ग्वाल-बालकोंके साथ खेल रहे थे, तब उनके शत्रु कंस द्वारा मारनेके लिए भेजे हुए अघ नामक असुरने एक योजन जितना लम्बा सर्प रूप धारण किया और बीच रास्तेमें पड़ रहा। वह कृष्णके साथ समस्त बालकोंको निगल गया। यह देखकर कृष्णने इस सर्पका गला इस तरह दबा लिया कि जिससे उस सर्प अघासुरका मस्तक फट गया, उसका दम निकल गया और वह मर गया। सब बालक उसके मुखमें से सकुशल बाहर निकल आये। यह वृत्तान्त सुनकर कंस निराश हुआ और देवता तथा ग्वाल प्रसन्न हुए।

—भागवत दशमस्कन्ध, अ० १२, श्लो० १२-३५ पृष्ठ ८३८

(२) आपसमें एक दूसरेको घोड़ा बनाकर उस पर चढ़नेका खेल कृष्ण और बलभद्र ग्वाल बालकोंके साथ खेल रहे थे। उस समय कंस द्वारा भेजा हुआ प्रलम्ब नामक अ-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वह देव बालकका रूप धरकर महावीरका घोड़ा बन गया। उसने दैवी शक्तिसे पहाड़सा विकराल रूप बनाया, फिर भी महावीर इससे तनिक भी न डरे और घोड़ा बनकर खेलने के लिए आए हुए उस देवको सिर्फ़ एक मुट्ठी मार कर झुका दिया। अन्तमें यह परीक्षक मत्सरी देव भगवान्के पराक्रमसे प्रसन्न होकर, उन्हें प्रणाम करके अपने रास्ते चला गया।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग २, पृ० २१-२२

सुर उस खेलमें सम्मिलित होगया। वह कृष्ण और बलभद्रको उड़ा ले जाना चाहता था। वह बलभद्रका घोड़ा बनाकर उन्हें दूरले गया और एक प्रचंड एवं विकराल रूप उसने प्रगट किया। अन्तमें बलभद्रने भयभीत न होते हुए सख्त मुष्टिप्रहार किया जिससे उसके मुँहसे खून गिरने लगा और उसे मार डाला। अन्तमें सब सकुशल वापिस लौटे।

—भागवत दशम स्कन्ध, अ० २०, श्लो० १८-३०, पृ० ८६८

(४)

साधक-अवस्था

(१) एकबार दीर्घ तपस्वी वर्द्धमान ध्यानमें लीन थे। उस समय शूलपाणि नामक यक्षने पहले-पहल तो इन तपस्वीको हाथीका रूप धारण करके कष्ट पहुँचाया, परन्तु जब इस कार्यमें वह सफल न हुआ तो उसने एक विचित्र सर्पका रूप धारण करके भगवान्को डंक मारा तथा मर्मस्थानोंमें असह्य वेदना उत्पन्न की। यह सब होने पर भी जब वे अचल तपस्वी ज़रा भी

(१) कालिय नामक नाग यमुनाके जलको ज़हरीला कर डालता था। इस उपद्रवको मिटानेके लिए कृष्णने, जहाँ कालिय नाग रहता था वहाँ जा कर उसे मारा। कालिय नागने इस साहसी तथा पराक्रमी बालकका सामना किया। उसने डंक मारा। मर्म स्थानोंमें डंक मारा और अपने अनेक फणोंसे कृष्णको सतानेका प्रयत्न किया। परन्तु इस दुर्दान्त चपल बालकने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

क्षुब्ध न हुए तो उस यक्ष का रोष शान्त हो गया। उसने अपने दुष्कर्मके लिए पश्चात्ताप किया और अन्तमें भगवान्से क्षमा माँग-कर उनका भक्त बनगया।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग ३, पृ० ३२-३३

(२) दीर्घ तपस्वी एकबार विचरते विचरते मार्गमें ग्वाल-बालकोंके मना करने पर भी जानबूझ कर एक ऐसे स्थानमें ध्यान धरकर खड़े हो गए जहाँ पूर्व जन्म के मुनिपद के समय क्रोध करके मरजाने के कारण सर्प रूपमें जन्म लेकर एक दृष्टिविष चण्डकौशिक साँप रहता था और अपने विषसे सबको भस्मसात् कर देता था। इस साँप ने इन तपस्वीको भी अपने दृष्टिविष से भस्म करनेका प्रयत्न किया। इस प्रयत्नमें निष्फल होने पर उसने अनेक डंक मारे। जब डंक मारने में भी उसे सफलता न मिली तो § चण्डकौशिक सर्पका क्रोध कुछ

नागको हाय तोबाह कराया और अन्तमें उसके फणों पर नृत्य किया। नाग अपने रोषको शान्त करके तेजस्वी कृष्णकी आज्ञाके अनुसार वहाँ से चला गया और समुद्रमेंजा बसा।

—भागवत, दशम स्कन्ध, अ० १६ श्लोक ३-३०, पृ० ८५८-५९

(२) एकबार किसी वनमें नदीके किनारे नन्द वगैरह गोप सो रहे थे। उस समय एक प्रचण्ड अजगर आया जो विद्याधरके पूर्व जन्ममें अपने रूपका अभिमान करनेके कारण मुनिका शाप मिलनेसे अ-भिमानके फलस्वरूप सर्पकी इस नीच योनिमें जन्मा था। उसने नन्द का पैर ग्रस लिया। जब दूसरे ग्वाल बालक नन्दका पैर छुड़ानेमें असफल हुए तो अन्तमें कृष्णने आकर अपने पैरसे साँपका स्पर्श किया। स्पर्श होनेके साथ ही सर्प अपना रूप छोड़कर मूल विद्याधर के सुन्दर रूपमें पलट गया। भक्तवत्सल कृष्णके चरणस्पर्शसे

---

§ जातकनिदान में बुद्धके विषयमें भी एक ऐसी ही बात लिखी है। उरु-वेलामें बुद्धने एकबार उलुवेलकाश्यप नामक पाँच सौ शिष्यवाले जटिलकी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शान्त हुआ। इन तपस्वीका सौम्य-रूप देखकर, चित्तवृत्ति शान्त होने पर उसे जातिस्मरण ज्ञान प्राप्त हुआ। अन्तमें धर्मकी आराधना करके वह देवलोकमें गया।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग ३, पृ० ३८–४०

(३) दीर्घ तपस्वी एक बार गंगा पार करनेके लिये नावमें बैठकर परले पार जारहे थे। उस समय इन तपस्वीको नावमें बैठा जानकर पूर्वभव के बैरी सुदंष्ट्र नामक देवने उस नावको उलट देनेके लिये प्रबल पवनकी सृष्टिकी और गंगा तथा नाव को हचमचा डाला। यह तपस्वी तो शान्त और ध्यानस्थ थे परन्तु दूसरे दो सेवक देवोंने इस घटनाका पता लगतेही आकर उस उपसर्गकारक देवको हराकर भगादिया। इस प्रकार प्रचंड पवनका उपसर्ग शान्त

उद्धार पाया हुआ यह सुदर्शन नामक विद्याधर कृष्णकी स्तुति करके विद्याधर लोकमें अपनी जगह चला गया।

—भागवत दशमस्कन्ध, अ० ३४, श्लो० ५–१५, पृ० ९१७–१८

(३) एकबार कृष्णका बध करने के लिये कंसने तृष्णासुर नामक असुरको व्रजमें भेजा। वह प्रचंड आँधी और पवनके रूपमें आया। कृष्णको उड़ाकर ऊपर लेगया परन्तु इस पराक्रमी बालकने उस असुरका गला ऐसा दबाया कि उसकी आँखें निकल पड़ीं और अन्तमें प्राणहीन होकर मर गया। कुमार कृष्ण सकुशल व्रजमें उतर आए।

भागवत, दशम स्कन्ध, अ० ११, श्लो० २४–३०

अग्निशालामें रात्रिवास किया। वहाँ एक उग्र आशीविष प्रचंड सर्प रहता था। बुद्धने उस सर्प को जरा भी चोट पहुँचाये विना ही निस्तेज कर डालने के लिए ध्यान समाधि की। सर्पने भी अपना तेज प्रकट किया। अन्तमें बुद्धके तेजने सर्प के तेजका पराभव कर दिया। प्रातःकाल बुद्धने जटिल को निस्तेज किया हुआ सर्प बताया। यह देखकर जटिल अपने शिष्योंके साथ बुद्धका शिष्य बन गया। यह ऋद्धिपाद या बुद्धका प्रातिहार्य अतिशय कहा गया है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

होजाने पर उस नावमें भगवानके साथ बैठे हुए अन्य यात्री भी सकुशल अपनी अपनी जगह पहुँचे।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, स० ३, पृ० ४१–४२

(४) एक बार दीर्घ तपस्वी एक वृक्षके नीचे ध्यानस्थ थे। वहीं पास में वनमें किसीके द्वारा सुलगाई हुई अग्नि फैलते फैलते इन तपस्वीके पैर में आकर छुई। सइचरके रूपमें जो गोशालक था वह तो अग्निका उपद्रव देखकर भाग छूटा परन्तु ये दीर्घ तपस्वी तो ध्यानस्थ एवं स्थिर ही बने रहे। अग्निका उपद्रव स्वयं शान्त होगया।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग ३, पृ० ५३।

(५) एकबार दीर्घ तपस्वी ध्यान में थे। उस समय किसी पूर्व जन्म की अपमानित उनकी पत्नी और इस समय व्यन्तरीके रूपमें मौजूद कटपूतना (दिम्बराचार्य जिनसेनकृत हरिवंश पुराणके अनुसार कुपूतना–सर्ग ३५ श्लो ४२ पृ० ३६७) आई। अत्यन्त ठण्ड होने पर भी इस वैरिणी व्यन्तरीने दीर्घ तपस्वी पर खूब ही

(४) एक बार यमुनाके किनारे व्रजमें आग लग गई। उस भयंकर अग्निसे तमाम व्रजवासी घबरा उठे परन्तु कुमार कृष्णने उससे न घबराकर अग्निपान कर उसे शांति कर दिया।

—भागवत. स्क० १०, अ० १७, श्लो० २१–२५ पृ० ८६६–६७

(५) कृष्णके नाश के लिये कंस द्वारा भेजी हुई पूतना राक्षसी व्रज में आई। इसने बाल कृष्णको विषमय स्तनपान कराया परन्तु कृष्णने इस षड्यंत्रको ताड़ लिया और उसके स्तनका ऐसी उग्रता से पान किया कि जिससे वह पूतना पीडित होकर फट पड़ी और मर गई।

—भागवत दशमस्कन्ध, अ० ६,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जलके बूँद उछाले और कष्ट देनेका प्रयत्न किया । कटपूतना के उग्र परिषहसे यह तपस्वी जब ध्यानसे विचलित न हुए तब अन्तमें वह शान्त हुई, पैरोंमें गिरी और तपस्वी की पूजा करके चली गई ।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १० सर्ग ३, पृ० ५८

(६) दीर्घ तपस्वीके उग्र तपकी इन्द्र द्वाराकी हुई प्रशंसा सुनकर उसे सहन न करने वाला संगम नामक देव परीक्षा करने आया । तपस्वीको उसने अनेक परिषह दिये। उसने एक बार उन्मत्त हाथी और हथिनी का रूप धरकर तपस्वीको दन्तशूलसे ऊपर उछाल कर नीचे पटक दिया। इसमें असफल होने पर उसने भयंकर बवण्डर रचकर इन तपस्वीको उड़ाया। इन प्रतिकूल परिषहोंसे तपस्वी जब ध्यानचलित न हुए तब संगमने अनेक सुन्दरी स्त्रियाँ रचीं। उन्होंने अपने हाव-भाव, गीत नृत्य, वादन, द्वारा तपस्वीको चलित करने का प्रयत्न किया परन्तु जब इसमें भी उसे सफलता न मिली तो अन्तमें उसने तइलो० १–९ पृ० ८१४

(६) एकबार मथुरामें मल्लक्रीड़ा के प्रसंग की योजना कर कंसने तरुण कृष्णको आमंत्रण दिया और कुवलयापीड हाथीके द्वारा कृष्ण को कुचलवानेकी योजना की परन्तु चकोर कृष्णने कंस द्वारा नियुक्त कुवलयापीड़को मर्दन करके मार डाला ।

—भागवत दशमस्कन्ध, अ० ४३, श्लो० १–२५ पृ० ६४७–४८

जब कोई अवसर आता है तो आसपास बसनेवाली गोपियाँ इकट्ठी होजाती हैं, रास खेलती हैं और रसिक कृष्णके साथ क्रीड़ा करती हैं । यह रसिया भी तन्मय होकर पूरा भाग लेता है और भक्त गोपी जनोंकी रसवृत्तिको विशेष उद्दीप्त करता है ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पत्नीको नमन किया और भक्त होकर उनकी पूजन करके चलता बना।

—त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र, पर्व १०, सर्ग ४, पृ० ६७–७२

—भागवत, दशमस्कन्ध, अ० ३०, श्लो० १–४०, पृ० ९०४–७

दृष्टिविन्दु।

(१) संस्कृति भेद—

ऊपर नमूनेके तौरपर जो थोड़ीसी घटनाएँ दी गई हैं, वे आर्यावर्तकी संस्कृतिके दो प्रसिद्ध अवतारी पुरुषोंके जीवनमें की हैं। उनमें से एक तो जैनसम्प्रदायके प्राणस्वरूप दीर्घतपस्वी महावीर हैं और दूसरे वैदिक सम्प्रदायके तेजोरूप योगीश्वर कृष्ण हैं। ये घटनाएँ सचमुच घटित हुई हैं, अर्धकल्पित हैं या एकदम कल्पित हैं, इस विचारको थोड़ी देरके लिए एक ओर रखकर यहाँ यह विचार करना है कि उक्त दोनों महापुरुषोंकी जीवनघटनाओंका ऊपरी ढाँचा एक सरीखा होनेपर भी उनके अन्तरंगमें जो अत्यंत भेद दिखाई दे रहा है, वह किस तत्त्वपर, किस सिद्धान्त पर और किस दृष्टि-विन्दु पर अवलम्बित है ?

उक्त घटनाओंकी साधारणरूपसे किन्तु ध्यानपूर्वक जाँच करने वाले पाठकपर तुरन्तही यह छाप पड़ेगी कि एक प्रकारकी घटनाओं में तप, सहिष्णुता और अहिंसाधर्म झलक रहा है, जब कि दूसरी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रकारकी घटनाओंमें शत्रुशासन, युद्धकौशल और दुष्टदमनकर्मका कौशल झलक रहा है। यह भेद जैन और वैदिक संस्कृतिके तात्त्विक भेदपर अवलम्बित है। जैन संस्कृतिका मूल तत्त्व या मूलसिद्धान्त अहिंसा है। जो अहिंसाकी पूर्णरूपसे साधना करे या उसकी पराकाष्ठाको प्राप्त हो गया हो, वही जैनसंस्कृतिमें अवतार बनता है। उसीकी अवतारके रूपमें पूजा होती है। वैदिक संस्कृतिमें यह बात नहीं। उसमें तो जो पूर्णरूपसे लोकसंग्रह करे, सामाजिक नियमकी रक्षाके लिये जो स्वमान्य सामाजिक नियमोंके अनुसार सर्वस्व अर्पण करके भी शिष्टका पालन और दुष्टका दमन करे, वही अवतार बनता है और अवतारके रूपमें उसीकी पूजा होती है। तत्त्वका यह भेद कोई मामूली भेद नहीं है। क्योंकि एकमें उत्तेजनाके चाहे जैसे प्रबल कारण विद्यमान हों, हिंसाके प्रसंग मौजूद हों, तो भी पूर्णरूपसे अहिंसक रहना पड़ता है; जब कि दूसरी संस्कृतिमें अन्तःकरणकी वृत्ति तटस्थ और सम होनेपर भी, विकट प्रसंग उपस्थित होनेपर प्राणोंकी बाजी लगाकर अन्यायकर्त्ताको प्राणदण्ड तक देकर, हिंसा के द्वारा भी अन्याय का प्रतीकार करना पड़ता है। जब इन दोनों संस्कृतियों में मूलतत्त्व और मूलभावना में ही भिन्नता है तो दोनों संस्कृतियों के प्रतिनिधि माने जाने वाले अवतारी पुरुषों की जीवन-घटनाएँ इस तत्त्व-भेदके अनुसार योजित की जाएँ, यह जैसे स्वाभाविक है उसी प्रकार मानसशास्त्रकी दृष्टिसे भी उचित है। यही कारण है कि हम एक ही प्रकार की घटनाओंको उक्त दोनों महापुरुषोंके जीवनमें भिन्न भिन्न रूपमें योजित की हुई देखते हैं।

अधर्म या अन्यायका प्रतीकार करना और धर्म या न्यायकी प्रतिष्ठा करना, यह तो प्रत्येक महापुरुषका लक्षण होता ही है। इसके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बिना कोई महापुरुष नहीं बन सकता। महान् पुरुषके रूपमें उसकी पूजा भी नहीं हो सकती। फिर भी उसकी पद्धतिमें भेद होता है। एक महान् पुरुष किसी भी प्रकारके, किसी भी अन्याय या अधर्म को अपनी सारी शक्ति लगाकर बुद्धिपूर्वक तथा उदारतापूर्वक सहन करके उस अधर्म या अन्यायको करनेवाले व्यक्तिका अन्तःकरण अपने तप द्वारा पलटकर उसमें धर्म एवं न्यायके राज्यकी स्थापना करनेका प्रयत्न करता है। दूसरे महापुरुषको व्यक्तिगत रूपसे धर्म-स्थापनकी यह पद्धति यद्यपि इष्ट होती है, तो भी वह लोकसमूहकी दृष्टिसे इस पद्धतिको विशेष फलप्रद न समझकर किसी और ही पद्धतिको स्वीकार करता है। वह अन्यायी या अधर्मीका अन्तःकरण समता या सहिष्णुताके द्वारा नहीं पलटता। वह तो "विषकी दवा विष" इस नीतिको स्वीकार कर अथवा 'शठके प्रति शठ' होनेवाली नीतिको स्वीकार कर उस अन्यायी या अधर्मीको मटियामेट करके ही लोकमें धर्म और नीतिकी स्थापना करने पर विश्वास करता है। विचारसरणीका यह भेद हम इस युगमें भी स्पष्ट रूपसे गाँधीजी तथा लोकमान्यकी विचार एवं कार्यशैलीमें देख सकते हैं।

किसी प्रकारकी ग़लतफ़हमी न हो, इस उद्देश्यसे यहाँ दोनों संस्कृतियोंके सम्बन्धमें कुछ विशेष जता देना उचित है। कोई यह न समझ ले कि इन दोनों संस्कृतियोंमें प्रारम्भसे ही मौलिक भेद है और दोनों एक दूसरीसे अलग रहकर ही पली-पुसी हैं। सचाई तो यह है कि एक अखंड आर्य संस्कृतिके दोनों अंश प्राचीन हैं। अहिंसा या आध्यात्मिक संस्कृतिका विकास होते होते एक ऐसा समय आया जब कुछ पुरुषोंने उसे अपने जीवनमें पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। इस कारण इन महापुरुषोंके सिद्धान्त और जीवन-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

महिमाकी ओर अमुक लोकसमूह झुका जो धीरे धीरे एक समाज के रूपमें संगठित हो गया। सम्प्रदायकी भावना तथा अन्य कई कारणोंसे यह अहिंसक समाज अपने आपको ऐसा समझने लगा मानो वह एकदम अलग ही है! दूसरी ओर सामान्य प्रजामें जो समाजनियामक या लोकसंग्राहिका संस्कृति पहलेसे ही मौजूद थी, वह चालू रही और अपना काम करती चली गई। जब जब किसी ने अहिंसाके सिद्धान्त पर अत्यन्त ज़ोर दिया तब तब इस लोक-संग्रहवाली संस्कृतिने उसे प्रायः अपना तो लिया, किन्तु उसकी आत्यन्तिकताके कारण उसका विरोध जारी रखा। इस प्रकार इस संस्कृति का अनुयायीवर्ग यह समझने और दूसरोंको समझाने लगा मानो वह प्रारम्भसे ही जुदा था। जैन संस्कृतिमें अहिंसाका जो स्थान है, वही स्थान वैदिक-संस्कृतिमें भी है। भेद है तो इतना ही कि वैदिक संस्कृति अहिंसाके सिद्धान्तको व्यक्तिगत रूपसे पूर्ण आध्यात्मिकता का साधन मानकर उसका उपयोग व्यक्तिगत ही प्रतिपादन करती है और समष्टिकी दृष्टिसे अहिंसा-सिद्धान्तको सीमित कर देती है। इस सिद्धान्तको स्वीकार करके भी समष्टिमें जीवन-व्यवहार तथा आपत्तिके प्रसंगोंमें हिंसाको अपवाद रूप न मानकर अनिवार्य उत्सर्ग रूप मानती है एवं वर्णन करती है। यही कारण है कि वैदिक-साहित्यमें जहाँ हम उपनिषद् तथा योगदर्शन जैसे अत्यन्त तप और अहिंसाके समर्थक ग्रंथ देखते हैं वहाँ साथ ही साथ 'शाठ्यं कुर्यात् शठं प्रति' की भावनाके समर्थक तथा जीवन व्यवहार किस प्रकार चलाना चाहिए, यह बताने वाले पौराणिक एवं स्मृति-ग्रन्थोंको भी प्रतिष्ठाप्राप्त देखते हैं। अहिंसा संस्कृतिकी उपासना करनेवाला एक वर्ग जुदा स्थापित होगया और समाजके रूपमें उसका संगठन भी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हो गया, पर कुछ अन्शोंमें हिंसात्मक प्रवृत्तिके बिना जीवित रहना तथा अपना तन्त्र चलाना तो उसके लिए भी सम्भव न था। क्योंकि किसी भी छोटे या बड़े समग्र समाजमें पूर्ण अहिंसाकी पालना होना असम्भव है। इसीसे जैनसमाजके इतिहासमें भी हमें प्रवृत्तिके विधान तथा विशेष प्रसंग उपस्थित होनेपर त्यागी भिक्षुके हाथसे हुए हिंसाप्रधान युद्ध देखनेको मिलते हैं। इतना सब कुछ होने पर भी जैनसंस्कृतिका वैदिक संस्कृतिसे भिन्न स्वरूप स्थिर ही रहा है और वह यह कि जैन संस्कृति प्रत्येक प्रकारकी व्यक्तिगत या समष्टिगत हिंसाको निर्बलताका चिह्न मानती है और इसलिए इस प्रकारकी प्रवृत्तिको अन्तमें वह प्रायश्चित्तके योग्य समझती है। वैदिक-संस्कृति ऐसा नहीं मानती। व्यक्तिगतरूपसे अहिंसातत्त्वके विषयमें उसकी मान्यता जैनसंस्कृतिके समान ही है, परन्तु समष्टिकी दृष्टिसे वह स्पष्ट घोषणा करती है कि हिंसा निर्बलताका ही चिह्न है, यह ठीक नहीं, बल्कि विशेष अवस्थामें तो वह बलवान्का चिह्न है, आवश्यक है, विधेय है, अतएव विशेष प्रसंग पर वह प्रायश्चित्तके योग्य नहीं है। लोकसंग्रहकी यही वैदिक-भावना सर्वत्र पुराणोंके अवतारोंमें और स्मृति ग्रन्थोंके लोकशासनमें हमें दिखलाई देती है।

इसी भेदके कारण ऊपर वर्णन किये हुए दोनों महापुरुषोंके जीवनकी घटनाओंका ढाँचा एक होने पर भी उसका रूप और झुकाव भिन्न भिन्न है। जैनसमाजमें गृहस्थोंकी अपेक्षा त्यागीवर्गकी संख्या बहुत कम है। फिर भी समस्त समाज पर (योग्य या अयोग्य, विकृत या अविकृत) अहिंसाकी जो छाप लगी हुई है, और वैदिक समाजमें परिव्राजक वर्ग अच्छी संख्यामें होने पर भी उस समाज पर पुरोहित गृहस्थवर्गकी चातुर्वर्ण्यिक लोकसंग्रहवाली वृत्ति

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

का जो प्रबल और गहरा असर है, उसका स्पष्टीकरण उपर्युक्त संस्कृतिभेदमें से आसानीके साथ प्राप्त किया जा सकता है।

(२) घटनाके वर्णनकी परीक्षा।

अब दूसरे दृष्टिबिन्दुके संबंधमें विचार करना है: वह दृष्टिबिन्दु, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह है कि इन वर्णनोंका आपसमें एक दूसरेपर कुछ प्रभाव पड़ा है या नहीं, और इससे क्या परिवर्त्तन या विकास सिद्ध हुआ है; इस बातकी परीक्षा करना। सामान्यरूप से इस सम्बन्धमें चार पक्ष हो सकते हैं—

(१) वैदिक तथा जैन दोनों सम्प्रदायोंके ग्रन्थोंका वर्णन एक दूसरेसे बिलकुल अलग है। किसी का किसी पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा है।

(२) उक्त वर्णन अत्यन्त समान एवं बिम्बप्रतिबिम्ब जैसा है अतः वह बिलकुल स्वतंत्र न होकर किसी एक ही भूमिकामें से उत्पन्न हुआ है।

(३) किसी भी एक सम्प्रदायकी घटनाओंका वर्णन दूसरी सम्प्रदायके वैसे वर्णन पर आश्रित है अथवा उसका उसपर प्रभाव पड़ा है।

(४) यदि एक सम्प्रदायके वर्णनका प्रभाव दूसरे सम्प्रदायके वर्णन पर पड़ा ही हो तो किसका वर्णन किस पर अवलम्बित है? उसने मूल कल्पना या मूल वर्णनकी अपेक्षा कितना परिवर्त्तन किया है और अपनी दृष्टिसे कितना विकास सिद्ध किया है?

(१) उक्त चार पक्षोंमें से प्रथम पक्ष संभव नहीं है। एक ही देश, एक ही प्रान्त, एक ही ग्राम, एक ही समाज और एक ही कुटुम्बमें जब दोनों सम्प्रदाय साथ ही साथ प्रवर्त्तमान हों तथा दोनों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सम्प्रदायोंके विद्वानों तथा धर्मगुरुओंमें शास्त्र, आचार और भाषा का ज्ञान एवं रीतिरिवाज एक ही हों, वहाँ भाषा और भावमें इतनी अधिक समानता रखने वाली घटनाओंका वर्णन, एक दूसरेसे सर्वथा भिन्न या एक दूसरेके प्रभावसे रहित मान लेना लोकस्वभाव की अनभिज्ञताको स्वीकार करना होगा।

(२–३) दूसरे पक्षके अनुसार यह कल्पना की जा सकती है कि दोनों सम्प्रदायोंका उक्त वर्णन पूर्णरूपमें न सही, अल्पांशमें ही किसी सामान्य भूमिकामें से आया है। इस संभावनाका कारण यह है कि इस देशमें भिन्न-भिन्न समयोंमें अनेक जातियाँ आई हैं और वे यहीं आबाद होगई हैं। संभव है वैदिक और जैन संस्कृतिके अंकुर पैदा होनेसे पहले गोप या आहीर जैसी बाहरसे आई हुई या मूलसे इसी देशमें रहनेवाली किसी विशेष जातिमें, कृष्ण और कंस के संघर्षणके समान या महावीर और देवोंके प्रसंगोंके समान, अच्छी अच्छी बातें वर्णित हों, और जब उस जातिमें वैदिक और जैन संस्कृतिका प्रवेश हुआ या इन संस्कृतियोंके अनुयायियोंमें उसका सम्मिश्रण हुआ तो उस जातिमें प्रचलित और लोकप्रिय हुई उन बातोंको वैदिक एवं जैन संस्कृतिके ग्रन्थकारोंने अपने अपने ढंगसे अपने अपने साहित्यमें स्थान दिया हो। जब वैदिक तथा जैनसंस्कृति के वर्णनोंमें कृष्णका संबंध ग्वालों और आहीरोंके साथ समान रूप से देखा जाता है और महावीरके जीवन-प्रसंगमें भी ग्वालोंका बार म्बार ज़िक्र पाया जाता है, तब तो दूसरे पक्षको और भी अधिक सहारा मिलता है। परन्तु वर्त्तमानमें दोनों संस्कृतियोंका जो साहित्य हमें उपलब्ध है और जिस साहित्यमें महावीर तथा कृष्णकी उल्लिखित घटनायें संक्षेपमें या विस्तारसे, समान रूपमें या असमानरूप

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

में चित्रित की गई नजर आती हैं, उन्हें देखते हुए दूसरे पक्षकी संभावनाको छोड़कर तीसरे पक्षकी निश्चितताकी ओर हमारा ध्यान आकर्षित होता है। हमें निश्चितरूपसे प्रतीत होने लगता है कि मूल में चाहे जो हो, परन्तु इस समयके उपलब्ध साहित्यमें जो दोनों वर्णन पाये जाते हैं उनमें से एक दूसरे पर अवश्य अवलम्बित है या एकका दूसरे पर प्रभाव पड़ा है; फिर भले ही वह पूर्णरूपमें न हो, कुछ अंशोंमें ही हो।

(४) ऐसी अवस्थामें अब चौथे पक्षके विषयमें विचार करना शेष रहता है। वैदिक विद्वानोंने जैन वर्णनको अपनाकर अपने ढंग से अपने साहित्यमें उसे स्थान दिया है या जैन लेखकोंने वैदिक-पौराणिक वर्णनको अपनाकर अपने ढंगसे अपने ग्रंथोंमें स्थान दिया है ? बस, यही विचारणीय प्रश्न है।

जैनसंस्कृतिकी आत्मा क्या है और मूल जैनग्रंथकारोंकी विचार-धारा कैसी होनी चाहिये ? इन दो दृष्टियोंसे यदि विचार किया जाय तो यह कहे बिना नहीं रहा जासकता कि जैन साहित्यका उल्लिखित वर्णन पौराणिक वर्णन पर अवलम्बित है। पूर्ण त्याग, अहिंसा और वीतरागताका आदर्श, यह जैन संस्कृतिकी आत्मा है और मूल जैन ग्रन्थकारोंका मानस इसी आदर्शके अनुसार गढ़ा होना चाहिये। यदि उनका मानस इसी आदर्शके अनुसार गढ़ा हुआ हो तभी जैन संस्कृतिके साथ उसका मेल बैठ सकता है। जैन संस्कृतिमें वहमों, चमत्कारों, कल्पित आडम्बरों तथा काल्पनिक आकर्षणोंको जराभी स्थान नहीं है। जितने अंशोंमें इस प्रकारकी कृत्रिम और बाहिरी बातोंका प्रवेश होता है, उतने ही अंशोंमें जैनसंस्कृतिका आदर्श विकृत एवं विनष्ट होता है। यदि यह सच है तो आचार्य समन्तभद्रके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शब्दोंमें, अंधश्रद्धालु भक्तोंकी अप्रीतिको अंगीकार करके और उनकी परवाह न करते हुए यह स्पष्ट कर देना उचित है कि भगवान महावीरकी प्रतिष्ठा न तो इन घटनाओंमें है और न बालकल्पना ऐसे दिखाई देनेवाले वर्णनोंमें ही। कारण स्पष्ट है। इस प्रकारकी दैवी घटनाएँ और अद्भुत चमत्कारी प्रसंग तो चाहे जिसके जीवनमें लिखे हुए पाये जासकते हैं। अतएव जब धर्मवीर दीर्घ तपस्वीके जीवनमें पग पग पर देवोंका आना देखा जाता है, दैवी उपद्रवोंको बाँचा जाता है, और असंभव प्रतीत होनेवाली कल्पनाओंका रंग चढ़ा हुआ नज़र आता है तो ऐसा मालूम होने लगता है कि भगवान् महावीर के जीवन-वृत्तान्तमें मिली हुई ये घटनाएँ वास्तविक नहीं हैं। ये घटनाएँ समीपवर्ती वैदिक-पौराणिक वर्णनमें से बादमें लेली गई हैं।

इस विधानको स्पष्ट करनेके लिए यहाँ दो प्रकारके प्रमाण उपस्थित किये जाते हैं:—

(१) प्रथम यह कि स्वयं जैन ग्रन्थोंमें महावीर जीवन संबंधी उक्त घटनाएँ किस क्रमसे मिलती हैं, और

(२) दूसरे यह कि जैन ग्रन्थोंमें वर्णित कृष्णके जीवन-प्रसंगों की पौराणिक कृष्ण-जीवनके साथ तुलना करना और इन जैन तथा पौराणिक ग्रन्थोंके समयका निर्धारण करना।

(१) जैन सम्प्रदायमें मुख्य दो फ़िरके हैं, दिगम्बर और श्वेताम्बर। दिगम्बर फ़िरकेके साहित्यमें महावीरका जीवन बिलकुल खंडित है और साथ ही इसी फ़िरकेके अलग अलग ग्रन्थोंमें कहीं कहीं कुछ कुछ विसंवादी भी है। अतएव यहाँ श्वेताम्बर फ़िरकेके ग्रंथोंको ही सामने रखकर विचार किया जाता है। सबसे प्राचीन माने जानेवाले अंग साहित्यमें सिर्फ़ दो अंग ही ऐसे हैं कि जिनमें

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

महावीरके जीवनके साथ उल्लिखित घटनाओंमें से किसी किसी की झलक नजर आती है। आचारांग सूत्रके—जो पहला अंग है और जिसकी प्राचीनता निर्विवाद सिद्ध है—पहले श्रुतस्कन्ध (उपधान सूत्र अ० ९) में भगवान् महावीरकी साधक अवस्थाका वर्णन है। परन्तु इसमें किसी भी दैवी, चमत्कारी या अस्वाभाविक उपसर्गका नाम निशान तक नहीं है। इसमें तो कठोर साधकके लिये सुलभ बिलकुल स्वाभाविक मनुष्यकृत तथा पशुपक्षीकृत उपसर्गोंका वर्णन है, जो अक्षरशः सत्य प्रतीत होता है, और एक वीतराग संस्कृति के निर्देशक शास्त्रके साथ सामंजस्य रखने वाला मालूम होता है। बादमें मिलाये हुये माने जाने वाले इसी आचारांगके द्वितीय श्रुतस्कन्धमें अत्यन्त संक्षेपमें भगवान्की सारी जीवनकथा आती है। इसमें गर्भके संहरणकी घटनाका निर्देश आता है, और किसी प्रकार का ब्यौरा दिये बिना—किसी विशेष घटनाका निरूपण न करते हुए—सिर्फ भयंकर उपसर्गोंको सहन करनेकी बात कही गई है। भगवती नामक पाँचवें अंगमें महावीरके गर्भसंहरणकी घटनाका वर्णन विशेष पल्लवित रूपमें मिलता है। उसमें यह कथन है कि यह घटना इन्द्रने देवके द्वारा कराई। फिर इसी अंगमें दूसरी जगह महावीर अपने को देवानन्दाका पुत्र बताते हुए गौतमको कहते हैं कि (भगवती श० ९ उद्देश ३३ पृ० ४५६) यह देवानन्दा मेरी माता है। (इनका जन्म त्रिशलाकी कोखसे होनेके कारण सब लोग इन्हें त्रिशलापुत्रके रूपमें तबतक जानते होंगे, ऐसी कल्पना दिखाई देती है)।

यद्यपि अंग विक्रमकी पाँचवीं शताब्दीके आस पास संकलित हुए हैं तथापि इस रूपमें या कहीं कहीं कुछ भिन्न रूपमें इन अंगों का अस्तित्व पाँचवीं शताब्दीसे प्राचीन है। इसमें भी आचारांगके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रथम श्रुतस्कंधका रूप और भी प्राचीन है। यह बात हमें ध्यानमें रखनी चाहिये। अंगके बादके साहित्यमें आवश्यक निर्युक्ति और उसका भाष्य गिना जाता है, जिनमें महावीरके जीवनसे सम्बन्ध रखनेवाली उपर्युक्त घटनाओंका वर्णन है। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिये कि यद्यपि निर्युक्ति एवं भाष्यमें इन घटनाओंका वर्णन है तथापि वह बहुत संक्षिप्त है और प्रमाणमें कम है। इनके बाद इस निर्युक्ति और भाष्यकी चूर्णिका समय आता है। चूर्णिमें इन घटनाओंका वर्णन विस्तारसे और प्रमाणमें अधिक पाया जाता है। चूर्णिका रचना काल सातवीं या आठवीं सदी माना जाता है। मूल निर्युक्ति ई० सं० से पूर्वकी होने पर भी इसका अन्तिम समय ईसा की पाँचवीं शताब्दीसे और भाष्यका समय सातवीं शताब्दीसे अर्वाचीन नहीं है। चूर्णिकारके पश्चात् महावीर के जीवन की अधिक से अधिक और परिपूर्ण वृत्तान्तकी पूर्ति करनेवाले आचार्य हेमचन्द्र हैं। हेमचन्द्रने त्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित्रके दशम पर्वमें तमाम पूर्ववर्त्ती महावीर-जीवन सम्बन्धी ग्रन्थोंका दोहन करके अपनी कवित्व की कल्पनाओंके रंगमें रँगकर महावीरका सारा जीवन वर्णन किया है। इस वर्णनमें से ऊपर जिन घटनाओंका उल्लेख किया गया है वे समस्त घटनाएँ यद्यपि चूर्णिमें विद्यमान हैं, तथापि यदि हेमचन्द्रके वर्णनको और भागवतके कृष्ण-वर्णनको सामने रखकर एक साथ पढ़ा जाय तो जरूर ही मालूम पड़ने लगेगा कि हेमचन्द्रने भागवतकारकी कवित्व शक्तिके संस्कारोंको अपनाया है।

अंग साहित्यसे लेकर हेमचन्द्रके काव्यमय महावीर-चरित तक, हम ज्यों ज्यों उत्तरोत्तर आगे बढ़ते-बाँचते-हैं, त्यों त्यों महावीरके जीवनकी सहज घटनाएँ क़ायम तो रहती हैं मगर उनपर दैवी और चमत्कारी घटनाओंका रंग अधिकाधिक भरता जाता है। अतएव

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जान पड़ता है कि जो घटनाएँ अस्वाभाविक प्रतीत होती हैं और जिनके बिना भी मूल जैनभावना अबाधित रह सकती है, वे घटनाएँ किसी न किसी कारणसे जैन साहित्यमें—महावीर जीवनमें—बाहरसे आ घुसी हैं।

इस बातको सिद्ध करनेके लिए यहाँ एक घटना पर विशेष विचार करना अप्रासंगिक न होगा। आवश्यकनिर्युक्ति, उसके भाष्य और चूर्णिमें महावीरके जीवनकी तमाम घटनाएँ संक्षेप या विस्तार से वर्णित हैं। छोटी बड़ी तमाम घटनाओंका संग्रह करके उन्हें सुरक्षित रखने वाली निर्युक्ति, भाष्य तथा चूर्णिके लेखकोंने महावीरके द्वारा सुमेरु कँपानेके आकर्षक वृत्तान्तका उल्लेख नहीं किया, जब कि उक्त ग्रंथोंके आधारपर महावीरजीवन लिखने वाले हेमचन्द्रने मेरुकम्पनका उल्लेख किया है। आचार्य हेमचन्द्रके द्वारा किया हुआ यह उल्लेख यद्यपि उसके आधारभूत निर्युक्ति, भाष्य या चूर्णिमें नहीं है, फिर भी आठवीं शताब्दीके दिगम्बर कवि रविषेणकृत पद्मपुराण में है †। रविषेणने यह वर्णन प्राकृतके 'पउमचरिय' से लिया है क्योंकि रविषेणका पद्मपुराण प्राकृत पउमचरियका अनुकरण मात्र है, और पउमचरियमें (द्वि० पर्व श्लो० २५–२६ पृ० ५) यह वर्णन उल्लिखित है। पद्मचरित दिगम्बर सम्प्रदायका ग्रंथ है, इसमें जरा भी विवाद नहीं है। पउमचरियके विषयमें अभी मतभेद है। पउमचरिय चाहे दिगम्बरीय हो, चाहे श्वेताम्बरीय हो, अथवा इन दोनों रूढ़ सम्प्रदायोंसे भिन्न तीसरे किसी गच्छके आचार्यकी कृति हो, कुछ भी हो, यहाँ तो सिर्फ़ यही विचारणीय है कि पउमचरियमें निर्दिष्ट मेरुकम्पन की घटनाका मूल क्या है ?

† द्वितीय पर्व श्लोक ७५–७६ पृष्ठ १५।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आगम ग्रंथों एवं निर्युक्तिमें इस घटनाका कुछ भी उल्लेख नहीं है, अतएव यह तो कहा ही नहीं जा सकता कि पउमचरियके कर्ता ने वहाँ से इसे लिया है । तब यह घटना आई कहाँ से ? यद्यपि पउमचरियका रचना-समय पहली शताब्दी निर्देश किया गया है, फिर भी कुछ कारणोंसे इस समयमें भ्रम जान पड़ता है । ऐसा मालूम होता है कि पउमचरिय ब्राह्मण पद्मपुराणके बादकी कृति है । पाँचवीं शताब्दीसे पूर्वके होनेकी बहुत ही कम संभावना है । चाहे जो हो, परन्तु अंग और निर्युक्ति आदिमें सूचित न की हुई मेरु-कम्पनकी घटना पउमचरियमें कहाँ से आई ? यह प्रश्न तो क़ायम ही रहता है ।

यदि पउमचरियके कर्त्ताके पास इस घटनाका उल्लेख करनेवाला अधिक प्राचीन कोई ग्रंथ होता और उसीके आधारपर उसने इसका उल्लेख किया होता तो शायद ही निर्युक्ति और भाष्यमें इसका उल्लेख होनेसे रह सकता था । अतएव कहना चाहिए कि यह घटना कहीं बाहरसे पउमचरियमें आ घुसी है । दूसरी ओर हरिवंश आदि ब्राह्मणपुराणोंमें फलद्रूप पौराणिक कल्पनामेंसे जन्मी हुई गोवर्धनको तोलनेकी घटनाका उल्लेख प्राचीनकालसे मिलता है ।

पौराणिक अवतार कृष्ण द्वारा गोवर्धन पर्वतका तोलन और जैन तीर्थंकर महावीर द्वारा सुमेरु पर्वतका कम्पन, इन दोनोंमें इतनी अधिक समानता है कि कोई भी एक कल्पना, दूसरीपर अवलम्बित है ।

हम देख चुके हैं कि आगम-निर्युक्ति ग्रंथोंमें, जिनमें कि गर्भ-संक्रमण सरीखे असंभव प्रतीत होने होने वाले वर्णनोंका उल्लेख है, उनमें भी सुमेरुकम्पनका संकेत तक नहीं है । किसी प्राचीन जैन परम्परामें से पउमचरियमें इस घटनाके लिए जानेकी बहुत कम

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

संभावना है। और ब्राह्मणपुराणोंमें पर्वतके उठानेका उल्लेख है। तब हमें यह माननेके लिए आधार मिलता है कि कवित्वमय कल्पना और अद्भुत वर्णनोंमें ब्राह्मण मस्तिष्कका अनुकरण करनेवाले जैन मस्तिष्कने, ब्राह्मण पुराणके गोवर्धन पर्वतको तोलने की कल्पनाके सहारे इस कल्पनाकी सृष्टि करली है।

पड़ौसी और विरोधी सम्प्रदाय वाला अपने भगवान्का महत्व गाते हुए कहता है कि पुरुषोत्तम कृष्णने तो अपनी अँगुलीसे गोवर्धन जैसे पहाड़को उठा लिया; तब साम्प्रदायिक मनोवृत्तिको संतुष्ट करनेके अर्थ जैनपुराणकार यदि यह कहें तो सर्वथा उचित जान पड़ता है कि—कृष्णने जवानीमें सिर्फ़ एक योजनके गोवर्धनको ही उठाया पर हमारे प्रभु महावीरने तो, जन्म होते ही, केवल पैरके अँगूठेसे, एक लाख योजनके सुमेरु पर्वतको दिगा दिया! कुछ दिनों बाद यह कल्पना इतनी मज़बूत हो गई, इतनी अधिक प्रचलित हो गई कि अन्तमें हेमचन्द्रने भी अपने ग्रंथमें इसे स्थान दिया। अब आज कलकी जैनजनता तो यही मानने लगी है कि महावीरके जीवनमें आने वाली मेरुकम्पनकी घटना आगमिक और प्राचीन ग्रंथगत है।

यहाँ उलटा तर्क करके एक प्रश्न किया जा सकता है। वह यह कि प्राचीन जैनग्रंथोंमें उल्लिखित मेरुकम्पनकी घटनाकी ब्राह्मण-पुराणकारोंने गोवर्धनको उठानेके रूपमें नक़ल क्यों न की हो? परन्तु इस प्रश्नका उत्तर एक स्थल पर पहले ही दे दिया गया है। वह स्पष्ट है। जैन ग्रन्थों का मूल स्वरूप काव्यकल्पनाका नहीं है और यह कथन इसी प्रकारकी काव्यकल्पनाका परिणाम है। पौराणिक कवियोंका मानस मुख्य रूपसे काव्यकल्पनाके संस्कारसे ही गढ़ा हुआ नज़र आता है। अतएव यही मानना उचित प्रतीत होता

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

है कि यह कल्पना पुराण द्वारा ही जैनकाव्योंमें, रूपान्तरित होकर घुस गयी है।

(२) कृष्णके गर्भावतरणसे लेकर जन्म, बाललीला और आगे के जीवन-वृत्तान्तोंका निरूपण करनेवाले प्रधान वैदिक पुराण हरिवंश, विष्णु, पद्म, ब्रह्मवैवर्त्त और भागवत हैं। भागवत लगभग आठवीं-नौवीं शताब्दीका माना जाता है। शेष पुराण किसी एकही हाथसे और एक ही समयमें नहीं लिखे गए हैं, फिर भी हरिवंश, विष्णु और पद्म ये पुराण पाँचवीं शताब्दीसे पहले भी किसी न किसी रूपमें अवश्य विद्यमान थे। इसके अतिरिक्त इन पुराणों के पहले भी मूल पुराणोंके अस्तित्वके प्रमाण मिलते हैं। हरिवंशपुराण से लेकर भागवतपुराण तकके उपर्युक्त पुराणोंमें आनेवाली कृष्णके जीवनकी घटनाओंको देखनेसे भी मालूम होता है कि इन घटनाओं में केवल कवित्वकी ही दृष्टिसे नहीं किन्तु वस्तुकी दृष्टिसे भी बहुत कुछ विकास हुआ है। हरिवंशपुराण और भागवतपुराणकी कृष्ण के जीवनकी कथा सामने रखकर पढ़नेसे यह विकास स्पष्ट प्रतीत होने लगता है।

दूसरी ओर जैन साहित्यमें कृष्णजीवनकी कथाका निरूपण करनेवाले मुख्य ग्रंथ दोनों—दिगम्बर और श्वेताम्बर—सम्प्रदायमें हैं। श्वेताम्बरीय अंग ग्रन्थोंमेंसे छट्ठे ज्ञाता और आठवें अंतगडमें भी कृष्णका प्रसंग आता है। वसुदेव हिन्डी (लगभग सातवीं शताब्दी, देखो पृ० ३६८, ३६९) जैसे प्राकृत ग्रन्थोंमें कृष्णके जीवनकी विस्तृत कथा मिलती है। दिगम्बरीय साहित्यमें कृष्ण-जीवनका विस्तृत और मनोरंजक वृत्तान्त बतानेवाला ग्रन्थ जिनसेनकृत (विक्रमीय ९ वीं शताब्दी) हरिवंशपुराण है और गुणभद्रकृत (विक्रमीय ९

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वीं शताब्दी) उत्तरपुराणमें भी कृष्णकी जीवनकथा है। दिगम्बरीय हरिवंशपुराण और उत्तरपुराण ये दोनों विक्रमकी नौवीं शताब्दीके ग्रंथ हैं।

कृष्णके जीवनके कुछ प्रसंगोंको लेकर देखिए कि वे ब्राह्मण-पुराणोंमें किस प्रकार वर्णन किए गये हैं और जैनग्रन्थोंमें उनका उल्लेख किस प्रकारका है ?

तुलना।

ब्राह्मणपुराण

(१) विष्णुके आदेशसे योग-मायाशक्तिके हाथों बलभद्रका देवकी के गर्भमें से रोहिणीके गर्भमें संहरण होता है।

—भागवत, स्कन्ध १०, अ० २ श्लो. ६–२३ पृ० ७९९

(२) देवकीके जन्मे हुए बलभद्र से पहलेके छह सजीव बालकोंको कंस पटक-पटक कर मार डालता है।

—भागवत, स्कन्ध १०, अ० २ श्लो, ५

जैनग्रंथ

(१) इसमें संहरणकी बात नहीं है, बल्कि रोहिणीके गर्भमें सहज जन्म लेनेकी बात है।

—हरिवंश, सर्ग ३२ श्लो० १–१०, पृ० ३२१

(२) वसुदेव हिन्डी (पृ० ३६८, ३६९) में देवकीके छः पुत्रोंको कंसने मार डाला, ऐसा स्पष्ट निर्देश है। परन्तु जिनसेन एवं हेमचन्द्रके वर्णन के अनुसार देवकी के गर्भजात छह सजीव बालकोंको एक देव, अन्य शहरमें, जैन कुटुम्बमें सुरक्षित पहुँचा देता है और उस बाईके मृतक जन्मे हुए छह बालकोंको क्रमशः देवकीके पास लाकर रखता है। कंस रोषके मारे जन्मसे ही उन मृतक बालकों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को पछाड़ता है और उस जैन गृहस्थ के घर पले हुए छह सजीव देवकी-बालक आगे जाकर नेमिनाथ तीर्थंकरके समीप दीक्षा लेकर मोक्ष जाते हैं।

—हरिवंश, सर्ग ३५, श्लो० १-३५ पृ० ३६३-३६४

(३) विष्णुकी योगमाया यशोदाके यहाँ जन्म लेकर वसुदेवके हाथों देवकीके पास पहुँचती है और उसी समय देवकीके गर्भसे उत्पन्न हुए कृष्ण वसुदेवके हाथों यशोदाके यहाँ सुरक्षित पहुँचते हैं। आई हुई पुत्री को मार डालनेके लिए कंस पटकता है। पर, वह योगामाया होने के कारण निकल भागती है और काली-दुर्गा आदि शक्तिके रूपमें पुजती है।

—भागवत, दशमस्कन्ध, अ० ४ श्लो, २-१० पृ० ८०९

(३) यशोदाकी तत्काल जन्मी हुई पुत्री कृष्णके बदले देवकीके पास लाई जाती है। कंस उस जीवित बालिकाको मारता नहीं है। वसुदेव-हिन्डीके अनुसार नाक काटकर और जिनसेनके कथनानुसार नाक सिर्फ चपटा करके छोड़ देता है। यह बालिका आगे चलकर तरुण अवस्थामें एक साध्वीसे जैनदीक्षा ग्रहण करती है और जिनसेनके हरिवंशके अनुसार तो यह साध्वी ध्यान अवस्थामें मर कर सद्गति पाती है लेकिन उसकी अँगुलीके लोहू भरे हुए तीन टुकड़ों से, वह बादमें त्रिशूलधारिणी काली के रूपमें विन्ध्याचलमें प्रतिष्ठा पाती है। इस कालीके समक्ष होने वाले भैंसोंके बधको जिनसेनने खूब आड़े हाथों लिया है जो आजतकभी विन्ध्याचलमें होता है।

—हरिवंश सर्ग ३९, श्लो, १-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

(४) कृष्णकी बाललीला और कुमारलीलामें जितने भी असुर कंस के द्वारा भेजे हुए आये और उन्होंने कृष्णको, बलभद्रको या गोपगोपियों को सताया है, करीब करीब वे तमाम असुर, कृष्णके द्वारा या कभी-कभी बलभद्रके द्वारा मार डाले गए हैं।

—भागवत स्कंध १०, अ० ५-८, पृ० ८१४

(५) नृसिंह विष्णुका एक अवतार है और कृष्ण तथा बलभद्र दोनों विष्णुके अंश होनेके कारण सदामुक्त हैं और विष्णुधाम स्वर्गमें विद्यमान हैं।

५१, पृ० ४५८-४६१

(४) ब्राह्मण पुराणोंमें कंस द्वारा भेजे हुए जो असुर आते हैं वे असुर, जिनसेनके हरिवंशपुराणके अनुसार कंस द्वारा पूर्व जन्म में साधी हुई देवियाँ हैं। ये देवियाँ जब कृष्ण, बलभद्र या व्रजवासियोंको सताती हैं तब वे कृष्णके द्वारा मारी नहीं जातीं वरन् कृष्ण उन्हें हराकर जीती ही भगा देते हैं। हेमचन्द्रके (त्रिषष्टि० सर्ग ५ श्लो, १२३-१२४) वर्णनके अनुसार कृष्ण, बलभद्र और व्रजवासियोंको सतानेवाली देवियाँ नहीं वरन् कंसके पाले हुए उन्मत्त प्राणी हैं। कृष्ण उनकाभी बध नहीं करते किन्तु दयालु जैनकी भाँति पराक्रमी होने परभी कोमल हाथसे इन कंस-प्रेरित उपद्रवी प्राणियोंको हराकर भगा देते हैं।

—हरिवंश, सर्ग ३५ श्लो, ३५-५० पृ० ३६६-३६७

(५) कृष्ण यद्यपि भविष्यकालीन तीर्थंकर होनेके कारण मोक्षगामी हैं किन्तु इस समय युद्धके फलस्वरूप वे नरकमें निवास करते हैं और बलभद्र जैनदीक्षा लेनेके कारण स्वर्ग गए

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

—भागवत, प्रथम स्कंध, अ० ३ श्लो, १–२४ पृ० १०—११

(६) द्रौपदी पाँच पांडवोंकी पत्नी है और कृष्ण पांडवोंके परम सखा हैं। द्रौपदी कृष्णभक्त है और कृष्ण स्वयं पूर्णावतार हैं।

—महाभारत

(७) कृष्णकी रासलीला एवं गोपीक्रीड़ा उत्तरोत्तर अधिक शृंगार-

हैं। जिनसेनने बलभद्रको ही नृसिंह रूपमें घटानेकी मनोरंजक कल्पना की है और लोकमें कृष्ण और बलभद्रकी सार्वत्रिक पूजा कैसे हुई, इसकी युक्ति कृष्णने नरकमें रहते रहते बलभद्रको बताई. ऐसा अति साम्प्रदायिक और काल्पनिक वर्णन किया है।

—हरिवंशपुराण सर्ग ३५, श्लो, १-५५, पृ० ६१८–६२५

(६) श्वेताम्बरोंके अनुसार द्रौपदीके पाँच पति हैं (ज्ञाता १६ वाँ अध्ययन) किन्तु जिनसेनने अर्जुन को ही द्रौपदीका पति बताया है और उसे एक पतिवालीही चित्रित किया है (हरिवंश सर्ग ५४ श्लो, १२-२५) द्रौपदी तथा पाण्डव सभी जैनदीक्षा लेते हैं। कोई मोक्ष और कोई स्वर्ग जाते हैं। सिर्फ़ कृष्ण कर्मोदयके कारण जैनदीक्षा नहीं ले सकते फिर भी बाईसवें तीर्थंकर अरिष्टनेमिके अनन्य उपासक बनकर भावी तीर्थंकर पदकी योग्यता प्राप्त करते हैं।

—हरिवंश, सर्ग ६५ श्लो० १६ पृ० ६१९–६२०

(७) कृष्ण रास और गोपी क्रीड़ा करते हैं पर वे गोपियोंके हावभावमें

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मय बनती जाती है और वह भी यहाँ तक कि अन्तमें पद्मपुराणमें भोगका रूप धारण करके बल्लभ सम्प्रदायकी भावनाके अनुसार महादेवके मुखसे उसे समर्थन मिलता है।

—पद्मपुराण अ० २४५ श्लोक १७५–१७६ पृ० ८८६–८९०

(८) इन्द्रने ब्रजवासियों पर जो उपद्रव किए उन्हें शान्त करनेके लिए कृष्ण गोवर्धन पर्वतको सात दिन तक हाथसे उठाए रखते हैं।

लुब्ध न होकर एकदम अलिप्त ब्रह्मचारी रहते हैं।

—हरिवंश, सर्ग ३५, श्लो, ६५-६६ पृ० ३६९

(८) जिनसेनके कथनानुसार इन्द्र द्वारा किए हुए उपद्रवोंको शांत करनेके लिए नहीं, वरन् कंसके द्वारा भेजी हुई देवीके उपद्रवोंको शान्त करनेके लिए कृष्णने गोवर्धनपर्वत को उठाया।

—हरिवंश सर्ग ३५, श्लो, ४८-५०, पृ० ३६७

पुराणों और जैनग्रन्थोंमें वर्णित कृष्णके जीवनकी कथाके, ऊपर जो थोड़ेसे नमूने दिये गये हैं उन्हें देखते हुए इस सम्बन्धमें शायद ही यह संदेह रहे कि कृष्ण वास्तवमें वैदिक या पौराणिक पात्र हैं और जैनग्रन्थोंमें उन्हें पीछेसे स्थान मिला है। पौराणिक कृष्ण जीवनकी कथामें मार–फाड़, असुर संहार और शृंगारी लीलाएँ हैं। जैन ग्रन्थकारोंने अपनी अहिंसा और त्यागकी भावनाके अनुसार उन लीलाओंको बदलकर अपने साहित्यमें एक भिन्न ही रूप दिया है। यही कारण है कि पुराणोंकी भाँति जैनग्रन्थोंमें न तो कंसके द्वारा बालकोंकी हत्या दिखाई देती है और न कंसके भेजे हुए उप-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

द्रवियोंका कृष्णके द्वारा प्राणनाश ही दिखाई पड़ता है। जैसे पृथ्वीराजने शाहबुद्दीनको छोड़ दिया उसी प्रकार कंसके भेजे हुए उपद्रवियोंको कृष्ण द्वारा जीते छोड़नेकी बात जैनग्रन्थोंमें पढ़नेको मिलती है। यही नहीं बल्कि सिवाय कृष्णके और सब पात्रोंके जैनदीक्षा स्वीकार करनेका वर्णन भी हम देखते हैं।

हाँ, यहाँ एक प्रश्न हो सकता है : वह यह कि मूलमें वसुदेव, कृष्ण आदिकी कथा जैनग्रन्थोंमें हो और बादमें वह ब्राह्मण ग्रन्थों में भिन्न रूपमें क्यों न ढाल दी गई हो ? परन्तु जैन आगमों तथा अन्य कथाग्रन्थोंमें कृष्ण-पाण्डव आदिका जो वर्णन किया गया है उसका स्वरूप, शैली आदिको देखते हुए इस तर्कके लिए गुंजाइश नहीं रहती। अतएव विचार करने पर यही ठीक मालूम होता है कि जब जनतामें कृष्णकी पूजा प्रतिष्ठा हुई, और इस संबंधका बहुतसा साहित्य रचा गया और वह लोकप्रिय होता गया तब समयसूचक जैन लेखकोंने रामचन्द्र की भाँति कृष्णको भी अपनालिया और पुराणगत कृष्ण-वर्णनमें, जैन दृष्टिसे प्रतीत होनेवाले हिंसाके विषको उतार कर उसका जैन संस्कृतिके साथ सम्बन्ध स्थापित कर दिया। इससे अहिंसाकी दृष्टिसे लिखे जाने वाले कथासाहित्यका विकास सिद्ध हुआ।

जब कृष्ण-जीवनके ऊधम और शृंगारसे परिपूर्ण प्रसंग जनता में लोकप्रिय होते गए तब यही प्रसंग एक ओर तो जैनसाहित्यमें परिवर्तनके साथ स्थान पाते गए और दूसरी ओर उन पराक्रमप्रधान अद्भुत प्रसंगोंका प्रभाव महावीरके जीवन-वर्णन पर होता गया, यह विशेष संभव है। इसी कारण हम देखते हैं कि कृष्णके जन्म, बालक्रीड़ा और यौवनविहार आदि प्रसंग, मनुष्य या अ-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मनुष्य रूप असुरों द्वारा किए हुए उपद्रव एवं उत्पातोंका पुराणोंमें जो अस्वाभाविक वर्णन है और उन उत्पातोंका कृष्ण द्वारा किया हुआ जो अस्वाभाविक किन्तु मनोरंजक वर्णन है वही अस्वाभाविक होने पर भी जनताके मानसमें गहरा उतरा हुआ वर्णन, अहिंसा और त्यागकी भावनावाले जैनग्रन्थकारोंके हाथों योग्य संस्कार पाकर महावीरके जन्म, बालक्रीड़ा और यौवनकी साधनावस्थाके समय देवकृत विविध घटनाओंके रूपमें स्थान पाता है। पौराणिक वर्णन की विशेष अस्वाभाविकता और असंगतिको हटानेके लिए जैन-ग्रन्थकारोंका यह प्रयास था किन्तु महावीर जीवनमें स्थान पाए हुए पौराणिक घटनाओंके वर्णनमें कुछ अंशोंमें एक प्रकारकी अस्वाभाविकता एवं असंगति रह ही जाती है और इसका कारण तत्कालीन जनताकी रुचि है।

३—कथाग्रन्थोंके साधनोंका पृथक्करण और उनका औचित्य।

अब हम तीसरे दृष्टिविन्दु पर आते हैं। इसमें विचारणीय यह है कि "जनतामें धर्मभावना जागृत रखने तथा सम्प्रदायका आधार मजबूत करनेके लिए उस समय कथाग्रन्थों या जीवनवृत्तान्तोंमें मुख्य रूपसे किस प्रकारके साधनोंका उपयोग किया जाता था? उन साधनोंका पृथक्करण करना और उनके औचित्यका विचार करना।"

ऊपर जो विवेचना की गई है, वह प्रारम्भमें किसी भी अति-श्रद्धालु साम्प्रदायिक भक्तको आघात पहुँचा सकती है, यह स्पष्ट है क्योंकि साधारण उपासक और भक्त जनताकी अपने पूज्य पुरुषके प्रति जो श्रद्धा होती है वह बुद्धिशोधित या तर्कपरिमार्जित नहीं होती। ऐसी जनताके खयालसे शास्त्रमें लिखा हुआ प्रत्येक अक्षर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

त्रैकालिक सत्यस्वरूप होता है। इसके अतिरिक्त जब उस शास्त्रको त्यागी गुरु या विद्वान् पंडित बाँचता है तब तो इस भोली जनताके मन पर शास्त्रके अक्षरार्थकी यथार्थताकी छाप वज्रलेप सरीखी हो जाती है। ऐसी अवस्थामें शास्त्रीय वर्णनोंकी परीक्षा करनेका और परीक्षापूर्वक उसे समझानेका कार्य अत्यन्त कठिन होजाता है, और विशिष्ट वर्गके लोगोंके गले उतरनेमें भी बहुत समय लगता है और वह बहुतसा बलिदान माँगता है। ऐसी स्थिति सिर्फ़ जैनसम्प्रदाय की ही नहीं किन्तु संसारमें जितने भी सम्प्रदाय हैं सबकी यही दशा है और इस बातका समर्थक इतिहास हमारे सामने मौजूद है।

यह युग विज्ञानयुग है। इसमें दैवी चमत्कार या असंगत कल्पनाएँ टिक नहीं सकतीं। अतएव इस समयके दृष्टिकोणसे प्राचीन महापुरुषोंके चमत्कारप्रधान जीवनचरितोंको पढ़ें तो उनमें बहुतसी असम्बद्धता और काल्पनिकता नज़र आवे, यह स्वाभाविक है। परन्तु जिस युगमें ये वृत्तान्त लिखे गए, जिन लोगोंके लिए लिखे गए और जिस उद्देश्यसे लिखे गए, उस युगमें प्रवेश करके, लेखक और पाठकके मानसकी जाँच करके, उसके लिखनेके उद्देश्यका विचार करके, गम्भीरतापूर्वक देखें तो हमें अवश्य मालूम होगा कि इस प्राचीन या मध्ययुगमें महान् पुरुषोंके जीवनवृत्तान्त जिस ढंग से चित्रित किए गए हैं वही ढंग उस समय उपयोगी था। आदर्श चाहे जितना उच्च हो, उसे किसी असाधारण व्यक्तिने बुद्धि शुद्ध करके भले ही जीवनगम्य कर लिया हो, फिर भी साधारण लोग इस अति सूक्ष्म और अति उच्च आदर्शको बुद्धिगम्य नहीं कर सकते। तो भी उस आदर्शकी ओर सबकी भक्ति होती है, सब उसे चाहते हैं, पूजते हैं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ऐसी अवस्था होनेके कारण लोगोंकी इस आदर्श सम्बन्धी भक्ति और धर्मभावनाको जागृत रखनेके लिए स्थूल मार्ग स्वीकार करना पड़ता है। जनताकी मनोवृत्तिके अनुसार ही कल्पना करके उसके समक्ष यह आदर्श रखना पड़ता है। जनताका मन यदि स्थूल होनेके कारण चमत्कारप्रिय और देवदानवोंके प्रतापकी वासना वाला हुआ तो उसके सामने सूक्ष्म और शुद्धतर आदर्शको भी चमत्कार एवं दैवी बाना पहनाकर रखा जाता है। तभी सर्वसाधारण लोग उसे सुनते हैं और तभी वह उनके गले उतरता है। यही वजह है, कि उस युगमें धर्मभावनाको जागृत रखनेके लिए उस समयके शास्त्रकारोंने मुख्य रूपसे चमत्कारों और अद्भुतताओंके वर्णनका आश्रय लिया है। इसके अतिरिक्त दूसरी बात यह है कि जब अपने पड़ौसमें प्रचलित अन्य सम्प्रदायोंमें देवताई बातों और चमत्कारी प्रसंगोंका बाजार गर्म हो तब अपने सम्प्रदायके अनुयायियोंको उस ओर जानेसे रोकनेका एकही मार्ग होता है और वह यही कि अपने सम्प्रदायको टिकाए रखनेके लिए वह भी विरोधी और पड़ौसी सम्प्रदायमें प्रचलित आकर्षक बातोंके समान या उससे अधिक अच्छी बातें लिखकर जनताके सामने उपस्थित करे। इस प्रकार प्राचीन और मध्ययुगमें धर्मभावनाको जागृत रखने तथा सम्प्रदाय को मजबूत करनेके लिए भी मुख्य रूपसे मंत्र-तंत्र, जड़ी-बूटी, दैवी चमत्कार आदि असंगत प्रतीत होने वाले साधनोंका उपयोग होता था।

गाँधीजी उपवास या अनशन करते हैं। संसारके बड़ेसे बड़े साम्राज्यके सूत्रधार व्याकुल हो उठते हैं। गाँधीजीको जेलसे मुक्त करते हैं; फिर पकड़ लेते हैं और दुबारा उपवास प्रारम्भ होने पर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

फिर छोड़ देते हैं। देशभरमें जहाँ जहाँ गाँधीजी जाते हैं वहाँ वहाँ जनसमुद्रमें ज्वारसा उमड़ आता है। कोई उनका अत्यन्त विरोधी भी जब उनके सामने जाता है तो एक बार तो मनोमुग्ध हो गर्व-गलित हो ही जाता है। वह एक वास्तविक बात है, स्वाभाविक है और मनुष्यबुद्धिगम्य है। किन्तु यदि इसी बातको कोई दैवी घटना के रूपमें वर्णन करे तो न तो कोई बुद्धिमान् मनुष्य उसे सुनने या स्वीकार करनेको तैयार होगा और न उसका असली मूल्य जो अभी आँका जाता है, क़ायम रह सकता है। यह युगबल अर्थात् वैज्ञानिक युगका प्रभाव है। यह बल प्राचीन या मध्ययुगमें नहीं था अतएव उस समय इसी प्रकारकी स्वाभाविक घटनाको जबतक दैवी या चमत्कारिक लिबास न पहनाया जाता तबतक लोगोंमें उसका प्रचार न हो पाता था। यह दोनों युगोंका अन्तर है, इसे समझकर ही हमें प्राचीन और मध्ययुगकी बातोंका तथा जीवन-वृत्तान्तोंका विचार करना चाहिए।

अब अन्तमें यह प्रश्न उपस्थित होता है कि शास्त्रमें उल्लिखित चमत्कारपूर्ण और दैवी घटनाओंको आज कल किस अर्थमें समझना और पढ़ना चाहिए? इसका उत्तर स्पष्ट है। वह यह कि किसी भी महान् पुरुषके जीवनमें 'शुद्ध बुद्धियुक्त पुरुषार्थ' ही सच्चा और मानने योग्य तत्त्व होता है। इस तत्त्वको जनताके समक्ष उपस्थित करनेके लिए शास्त्रकार विविध कल्पनाओंकी भी योजना करते हैं। धर्मवीर महावीर हों या कर्मवीर कृष्ण हों, किन्तु इन दोनोंके जीवनमें से सीखने योग्य तत्त्व तो एकही होता है। धर्मवीर महावीर के जीवनमें यह पुरुषार्थ अन्तर्मुख होकर आत्मशोधनका मार्ग ग्रहण करता है और आत्मशोधनके समय आने वाले आन्तरिक या

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बाह्य–प्राकृतिक–समस्त उपसर्गोंको यह महान् पुरुष अपने आत्मबल और दृढ़ निश्चयके द्वारा जीत लेते हैं और अपने ध्येयमें आगे बढ़ते हैं। यह विजय कोई ऐसा वैसा साधारण मनुष्य नहीं प्राप्त कर सकता, अतः इस विजयको दैवीविजय कहनेमें ज़रा भी अतिशयोक्ति नहीं है। कर्मवीर कृष्णके जीवनमें यह पुरुषार्थ बहिर्मुख होकर लोक संग्रह और सामाजिक नियमनका रास्ता लेता है। इस ध्येयको सफल बनानेमें शत्रुओं या विरोधियोंकी ओरसे जो अड़चनें डाली जाती हैं, उन सबको कर्मवीर कृष्ण अपने धैर्य, बल तथा चतुराई से हटाकर अपना कार्य सिद्ध करते हैं। यह लौकिक सिद्धि साधारण जनताके लिए अलौकिक या दैवी मानी जाय तो कुछ असंभव नहीं। इस प्रकार हम इन दोनों महान् पुरुषोंके जीवनको, यदि कलई दूर करके पढ़ें तो उलटी अधिक स्वाभाविकता और संगतता नज़र आती है और उनका व्यक्तित्व अधिकतर माननीय, विशेषतया इस युगमें, बन जाता है।

उपसंहार।

कर्मवीर कृष्णके सम्प्रदायके भक्तोंको धर्मवीर महावीरके आदर्शकी विशेषताएँ चाहे जितनी दलीलोंसे समझाई जाँय, किन्तु वे शायद ही पूरी तरह उन्हें समझ सकेंगे। इसी प्रकार धर्मवीर महावीरके संप्रदायके अनुयायी भी शायद ही कर्मवीर कृष्णके जीवनादर्शकी खूबियाँ समझ सकें। जब हम इस साम्प्रदायिक मनोवृत्तिको देखते हैं तो यह विचार करना आवश्यक हो जाता है कि क्या वास्तवमें धर्म और कर्मके आदर्शोंके बीच ऐसा कोई विरोध है जिससे एक आदर्शके अनुयायी दूसरे आदर्शको एक दम अग्राह्य कर देते हैं या उन्हें वह अग्राह्य प्रतीत होता है?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

विचार करनेसे मालूम होता है कि शुद्धधर्म और शुद्धकर्म, ये दोनों एक ही आचरणगत सत्यके जुदा जुदा बाजू हैं। इनमें भेद है किन्तु विरोध नहीं है।

सांसारिक प्रवृत्तियोंको त्यागना और भोगवासनाओंसे चित्तको निवृत्त करना, तथा इसी निवृत्तिके द्वारा लोककल्याणके लिए प्रयत्न करना अर्थात् जीवन धारणके लिए आवश्यक प्रवृत्तियोंकी व्यवस्था का भार भी लोकोंपर ही छोड़कर सिर्फ़ उन प्रवृत्तियोंमें के क्लेश-कलहकारक असंयम रूप विषको दूर करना, जनताके सामने अपने तमाम जीवनके द्वारा पदार्थपाठ उपस्थित करना, यही शुद्धधर्म है।

और संसार सम्बन्धी तमाम प्रवृत्तियोंमें रहते हुए भी उनमें निष्कामता या निर्लेपताका अभ्यास करके, उन प्रवृत्तियोंके सामञ्जस्य द्वारा जनताको उचित मार्गपर लेजानेका प्रयास करना अर्थात् जीवनके लिए अति आवश्यक प्रवृत्तियोंमें पग-पग पर आने वाली अड़चनोंका निवारण करनेके लिए, जनताके समक्ष अपने समग्र जीवन द्वारा लौकिक प्रवृत्तियोंका भी निर्विष रूपसे पदार्थपाठ उपस्थित करना, यह शुद्धकर्म है।

यहाँ लोककल्याणकी वृत्ति यह एक सत्य है। उसे सिद्ध करने के लिये जो दो मार्ग हैं वे एक ही सत्यके धर्म और कर्मरूप दो बाजू हैं। सच्चे धर्ममें सिर्फ़ निवृत्तिही नहीं किन्तु प्रवृत्ति भी होती है। सच्चे कर्ममें केवल प्रवृत्ति ही नहीं मगर निवृत्ति भी होती है। दोनोंमें दोनों ही तत्त्व विद्यमान हैं, फिर भी गौणता और मुख्यताका तथा प्रकृति भेदका अन्तर है। अतः इन दोनों तरीकोंसे स्व तथा पर-कल्याणरूप अखंड सत्यको साधा जा सकता है। ऐसा होने पर भी धर्म और कर्मके नामसे अलग अलग सम्प्रदायोंकी स्थापना क्यों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हुई, यह एक रहस्य है। किन्तु यदि साम्प्रदायिक मनोवृत्तिका विश्लेषण किया जाय तो इस अनुद्घाट्य प्रतीत होने वाले रहस्यका उद्घाटन स्वयमेव हो जाता है।

स्थूल या साधारण लोग जब किसी आदर्शकी उपासना करते हैं तो साधारणतया वे उस आदर्शके एकाध अंशको अथवा उसके ऊपरी खोखलेसे ही चिपट कर उसीको सम्पूर्ण आदर्श मान बैठते हैं। ऐसी मनोदशाके कारण धर्मवीरके उपासक, धर्मका अर्थ अकेली निवृत्ति समझकर उसीकी उपासनामें लग गए और अपने चित्तमें प्रवृत्तिके संस्कारोंका पोषण करते हुए भी प्रवृत्ति अंशको विरोधी समझकर अपने धर्मरूप आदर्शसे उसे जुदा रखनेकी भावना करने लगे। दूसरी ओर कर्मवीरके भक्त कर्मका अर्थ सिर्फ प्रवृत्ति करके, उसीको अपना परिपूर्ण आदर्श मान बैठे और प्रवृत्तिके साथ जुड़ने योग्य निवृत्तिके तत्त्वको एक किनारे करके प्रवृत्तिको ही कर्म समझने लगे। इस प्रकार धर्म और कर्म दोनोंके उपासक एक दूसरेसे बिलकुल विपरीत आमने सामनेके किनारों पर जा बैठे। उसके पश्चात् एक दूसरेके आदर्शको अधूरा, अव्यवहार्य अथवा हानिकारक बताने लगे। परिणाम यह हुआ कि साम्प्रदायिक मानस ऐसे विरुद्ध संस्कारोंसे गढ़ा जा चुका है कि यह बात समझना भी अब कठिन हो गया है कि धर्म और कर्म ये दोनों एक ही सत्यके दो बाजू हैं। यही कारण है कि धर्मवीर महावीर और कर्मवीर कृष्ण के पंथमें परस्पर विरोध, अन्यमनस्कता और उदासीनता दिखाई पड़ती है।

यदि विश्वमें सत्य एक ही हो और उस सत्यकी प्राप्तिका मार्ग एक ही न हो तो भिन्न भिन्न मार्गोंसे उस सत्यके समीप किस प्रकार पहुँच सकते हैं, इस बातको समझनेके लिए विरोधी और भिन्न-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भिन्न दिखाई देनेवाले मार्गोंका उदार और व्यापक दृष्टिसे समन्वय करना प्रत्येक धर्मात्मा और प्रतिभाशाली पुरुषका आवश्यक कर्त्तव्य है। अनेकान्तवादकी उत्पत्ति वास्तवमें ऐसी ही विश्वव्यापी भावना और दृष्टिसे हुई है तथा उसे घटाया जा सकता है।

इस जगह एक धर्मवीर और एक कर्मवीरके जीवनकी कुछ घटनाओंकी तुलना करनेके विचारमें से यदि हम धर्म और कर्मके व्यापक अर्थका विचार कर सकें तो यह चर्चा शब्दपटु पंडितोंका कोरा विवाद न बनकर राष्ट्र और विश्वकी एकतामें उपयोगी होगी।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

यदि आप

व्यावहारिक, धार्मिक एवं औद्योगिक शिक्षा के द्वारा अपने पुत्र को सशक्त एवं स्वाश्रयी बनाना चाहते हैं तो **अपने बच्चों को जैन गुरुकुल ब्यावर** में भेजिये।

प्रवेश की योग्यता--हिन्दी ३ या गुजराती ४ किताब पढ़े हुए, ८ से ११ वर्ष की उम्र के, निरोग, बुद्धिमान् बच्चे किसी प्रान्त या जाति के हों वे गुरुकुल में ७ वर्ष के वास्ते प्रविष्ट हो सकेंगे। मासिक रु० १०), ७) ५) यथाशक्ति भोजन खर्च देकर या फ्री भर्ती करा सकेगें।

आपका कर्त्तव्य

गुरुकुल को हर प्रकार सहायता देना, मकान बनवा देना, स्थायी कोष बढ़ाना, अमुक मितियों का खर्च देना और अपने बच्चों को गुरुकुल में भेजना आपका कर्त्तव्य है। यदि आपकी सर्व प्रकार से सहानुभूति व सहायता होती रही तो थोड़े अर्से में ही जैन-गुरुकुल, ब्यावर जैन विद्यापीठ बन सकेगा।

पत्र-व्यवहार का पता:--

मंत्री, जैन-गुरुकुल, ब्यावर.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शिक्षादायी सुन्दर सस्ती

और

उपयोगी पुस्तकें।

१—जैन शिक्षा-भाग १	-)॥।
२—जैन शिक्षा-भाग २	=)॥
३—जैन शिक्षा-भाग ३	≡)
४—जैन शिक्षा-भाग ४ (सचित्र)	≡)॥
५—जैन शिक्षा-भाग ५	।-)
६—बालगीत	)॥
७—आदर्श जैन	।)
८—आदर्श साधु	।)
९—विद्यार्थी व युवकों से	=)
१०—विद्यार्थी की भावना	-)
११—सुखी कैसे बनें ?	-)
१२—धन का दुरुपयोग	)॥
१३—रेशम व चर्बी के वस्त्र	)॥
१४—पशुबध कैसे रुके ?	=)॥
१५—आत्म जागृति-भावना	।)
१६—समकित स्वरूप भावना	-)॥
१७—मोक्ष की कुञ्जी १ भाग	=)
१८—मोक्ष की कुञ्जी २ भाग	=)॥
१९—आत्मबोध भाग १-२-३	।-)
२०—आत्मबोध भाग २-३	≡)
२१—काव्य विलास	-)॥
२२—परमात्मा प्रकाश	=)
२३—भाव अनुपूर्वि	-)
२४—मोक्षनी कुंची बेभाग	।)
२५—सामायिकप्रति प्रश्नोत्तर	)॥
२६—तत्त्वार्थाधिगमसूत्रम्	=)
२७—आत्मसिद्धि	)॥
२८—आत्मसिद्धि और सम्यकत्त्व	)॥
२९—धर्मों में भिन्नता	)॥
३०—जैनधर्मपर अन्यधर्मोंकाप्रभाव	
३१—समकित के चिह्न १ भाग	)॥
३२—समकित के चिह्न २ भाग	)॥
३३—सम्यक्त्व के आठ अंग	=)
३४ धर्मवीर महावीर और कर्मवीर कृष्ण	-)॥

व्यवस्थापक:—

आत्म-जागृति-कार्यालय, ठि० जैन-गुरुकुल, ब्यावर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com